ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान

१ **माता मल्दालसा का जीवन १० ०४ १९८७-- 7**

वेदमन्त्र और मानव जीवन-- 7

ब्रह्मचर्य-- 7

गृहपथ्य --- 8

गाहर्पथ्य -- 8

राजा मनुवृत्ति व माता मल्दालसा--- 9

माता मल्दालसा की प्रतिज्ञाएँ-- 9

गर्भस्थ आत्मा को शिक्षा---10

विवेक---12

ब्रह्मवेत्ता द्वितीय बाल्य--12

माता मल्दालसा का तृतीय गर्भ --12

राजा की चिन्ता---13

माता मल्दालसा का ब्रह्मलीन होना ---13

संस्कारों का जीवन पर प्रभाव ---13

आपत्तिकाल में विवेक जागृति ---14

राष्ट्र की प्रणाली --14

गाहर्पथ्याग्नि--15

त्याग की महिमा--15

वृद्धावस्था--15

२ **वैदिक-विज्ञान ०५ ०२ १९८९ ---16**

मानवीय-जिज्ञासा --16

उद्यालक गोत्रीय ऋषियों का विज्ञान ---17

महर्षि भारद्वाज की विज्ञानशाला--18

महर्षि सोमकेतु द्वारा छठे महापिता के दर्शन ---19

माताओं को प्राण विद्या का विस्तृत ज्ञान--19

प्राण विद्या से दीप मालिका--20

३ **तप का स्वरूप ०७ ०२ १९८९---22**

प्रेरणा का स्रोत --22

प्रकाश का मार्ग--23

तप में जीवन --23

पवित्रता का क्रम --25

ब्राह्मण स्वरूप--25

मन और प्राण का सन्निधान---26

मृत्युंजय स्वरूप--26

४ **महर्षि याज्ञवल्क्य का तप ०८ ०२ १९८९--28**

नैमित्तिक एवं स्वाभाविक ज्ञान ---------- 28
तप की अनिवार्यता ---------- 28
तप की महत्ता ---------- 28
याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का तप ---------- 29
महर्षि याज्ञवल्क्य एवं मैत्रेयी सम्वाद ---------- 30
आत्म कल्याण ---------- 30
आत्मतृप्ति हेतु कर्म ---------- 30
ज्ञान और प्रयत्न ---------- 31
ऋषि याज्ञवल्क्य की तपस्या और सतपथ ब्राह्मण ---------- 31
देवासुर-सङ्ग्राम ---------- 32
यज्ञ-महिमा ---------- 32
साधक ---------- 33
यज्ञ-शक्ति ---------- 33
साधना ---------- 34
मोक्ष हेतु तप की अनिवार्यता ---------- 34
५ महर्षि शिकामकेतु का विज्ञान ०९ ०२ १९८१ ---------- 36
सृष्टि एक यज्ञशाला ---------- 36
ऋषियों की सभा ---------- 37
महर्षि कागभुषुण्ड एवं महर्षि लोमश की महानता ---------- 37
महर्षि शिकामकेतु की विज्ञानशाला ---------- 38
याग की अनुपमता ---------- 38
ऋषियों की वंश परम्परा ---------- 39
वर्तमानकाल ---------- 40
राष्ट्र में अहिंसा ---------- 40
रामराज्य वा पाण्डुराज्य का आधार ---------- 40
नाग जाति को शरण ---------- 40
महाराज पाण्डु का आहार-विहार ---------- 41
धर्म ---------- 41
विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यो में शास्त्रार्थ ---------- 42
राष्ट्रीय एकता ---------- 42
६ महर्षि भारद्वाज का विज्ञान १२ ०२ १९८९ ---------- 44
ऋषियों द्वारा संसार के सम्बन्ध में विचार ---------- 44
महर्षि भारद्वाज ---------- 44
यज्ञाग्नि की तरंगों पर अध्ययन ---------- 45
रक्त बिन्दु से मानव चित्र ---------- 45

विज्ञान के अन्तिम परिणामों की विवेचना --46
कर्त्तव्यवाद की प्रतिष्ठा---46
धर्म और कर्त्तव्यवाद---46
राष्ट्राध्यक्ष के गुणावगुण --47
भौतिक विज्ञान के दुरुपयोग का परिणाम --47
यन्त्र द्वारा 72 लोकों का भ्रमण---48
महर्षि शिकामकेतु उद्यालक की विज्ञानशाला--48
अधिकारों की पूर्ति असम्भव---48
भौतिक विज्ञान की आवश्यकता---49
७ **संस्कारों की प्रभा १६ ०२ १९८९ --51**
आत्मतत्त्व--51
संस्कार --51
नारी शिक्षा --51
मानव जीवन के आधार भूत तत्त्व--52
विष्णु स्वरूपा माता ---52
विष्णु, शिव व ब्रह्मा की विवेचना---52
मातृशक्ति व माता मल्दालसा --53
संस्कारित शिशु--53
माता मल्दालसा का वेदज्ञान--54
ब्रह्म की व्याख्या ---55
आत्म तत्व---55
संस्कार विहीन बाल्य ---56
माता मल्दालसा का अप्रतिम वैराग्य--56
भगवान मनु की राष्ट्र प्रणाली ---56
तप की अनिवार्यता---57
८ **राम राज्य का आधार १७ ०२ १९८९ ---59**
विज्ञान की अनिवार्यता व आचार संहिता ---59
वैदिक नारी आयुर्विज्ञान एवं धनुर्विज्ञान में पारायण ---59
राम का राष्ट्रवाद व तप---60
राष्ट्रहित में भी हिंसा पापाचार--60
राष्ट्र के विभिन्न प्रकार ---60
मानसिक प्रवृत्तियों का शोधन ---60
रात्रि और दिवस की अवधारणा ---61
अनुशासन से आत्मोन्नति---62
राजा का अध्वर्यु स्वरूप --62

संस्कार हेतु वातावरण --63

अयोध्या और उसके राजा--63

वर्तमान का हिंसक राष्ट्रवाद --64

राजा की कार्य-प्रणाली--64

९ जगत् के दो प्रकार १८ ०२ १९८९ --66

यौगिकवाद एवं रूढ़िवाद की व्याख्या --66

अपनापन अथवा समग्रता--66

धर्म और कर्त्तव्यवाद--66

भस्मासुर गाथा विज्ञान के दुरूपयोग का परिणाम--67

माता पार्वती का आत्मविश्वास --67

महर्षि भारद्वाज के विज्ञान की उपादेयता --68

महर्षि भारद्वाज द्वारा विज्ञान की विवेचना --68

विज्ञान में अभिमान--69

ज्ञान विज्ञान की सारगर्भिता --69

आध्यात्मिक विज्ञान--69

निरभिमानी ऋषि-मुनि--70

विज्ञान का स्वरूप--70

यज्ञ-महिमा --71

बुद्धि विकास हेतु विज्ञान--71

१० विभिन्न याग एवं अग्नियाँ १९ ०२ १९८९ --73

सर्वोपरि कर्म याग--73

याग के विभिन्न स्वरूप --73

महर्षि शिकामकेतु के आश्रम में ऋषियों की सभा--74

अग्निष्टोम याग--74

पितृयाग--75

विभिन्न अग्नियों की व्याख्या --75

यजमान को शुभाशीष--76

राष्ट्रवाद की विवेचना --76

चारित्रिक पतन का परिणाम --77

धर्म व रूढ़ि--77

राष्ट्रोन्नति के कार्य--78

१ माता मल्दालसा का जीवन १० ०४ १९८७

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि जितना भी ये जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वो मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है, वे परमपिता परमात्मा वरणीय है और जो भी मानव उसको अपना वरूण बना लेता है अथवा वर लेता है प्रायः वो उसी को प्राप्त हो जाता है। इसीलिये हमारा वेद का मन्त्र ये कहता है हे मानव! तू उसे अपना वरणीय बना। अथवा उसे तू अपने वरने के योग्य यदि कोई संसार में है तो वे परमपिता परमात्मा, जो सृष्टि का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है। तो आज हम उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसकी महिमा का सदैव गुणगान गाते रहें। क्योंकि मानव के हृदय में भिन्न-भिन्न प्रकार की, तरंगो का प्रादुर्भाव रहता है और नाना प्रकार की तरंगों में वो रमण करता रहता है।

वेदमन्त्र और मानव जीवन

मुझे बेटा! बहुत सा काल स्मरण आता रहता है। ऋषि-मुनियों का वो काल भी स्मरण आता रहा है, जिस काल में बेटा! एकान्त स्थलियों पर विद्यमान होकर के, मानवीय जीवन की चर्या को उन्होंने निर्धारित किया हमारे आचार्यों ने बेटा! प्रारम्भ से लेकर के और अन्तिम सूत्र तक मानो उस परमपिता परमात्मा की महती, वेद मन्त्र का चिन्तन करते हुए उन्होंने मानो जीवन को एक कटिबद्ध किया। जैसे माला में, भिन्न-भिन्न प्रकार के मनके होते हैं परन्तु जो भिन्न-भिन्न प्रकार के मनके हैं, एक सूत्र में पिरोए जाते हैं। इसी प्रकार मानव के जीवन को बेटा! एक सूत्र में कटिबद्ध करने का प्रयास किया और ऋषि-मुनियों ने अपने जीवन का मन्थन किया। और वेद-मन्त्रों को लेकर के उन्होंने एक-एक मानो एकाकी और मानव के जीवन की एक प्रतिभा अथवा उनके "कर्मणेः वाचन्नमं ब्रह्माः" उनका एक क्रियाकलाप बनाया।

ब्रह्मचर्य

तो मेरे प्यारे! उन क्रियाकलापों में प्रत्येक मानव को अपने में बेटा! अपनेपन का दर्शन करना है। मेरे प्यारे! सबसे प्रथम मानव के जीवन को उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत में कटिबद्ध किया और ये कहा कि हे मानव! हे ब्रह्मचारी! तू आचार्य के कुल में प्रवेश होकर के अपने जीवन को मानो ब्रह्मवर्चोसि बना। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचर्य के दो प्रकार के अर्थ माने गये हैं। एक ब्रह्म है, दूसरा चरी। मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्म कहते हैं परमपिता परमात्मा को और चरी कहते हैं प्रकृति को, जो मानो देखो, नाना प्रकार के व्यंजनों वाली है। अथवा जो भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यंजनों वाली जो प्रतिभा कहलाती है उसका नाम प्रकृति कहलाता है। मेरे प्यारे! ब्रह्म उसे कहते हैं जैसे ब्रह्मवर्चोसि जिसमें मानो एक पिरोया हुआ है उसे ब्रह्म कहा जाता है। वह ब्रह्मचरिष्यामि। तो मेरे पुत्रो! देखो, दोनों का समन्वय होता है। दोनों के समन्वय की प्रतिभा, एक महानता में परिणत होती हुई मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचर्य शब्द का निर्माण हो जाता है। और वह जो ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्मचर्य है। मेरे प्यारे! देखो, चरी को ब्रह्म जैसे रमण कराता रहता है क्योंकि बिना सन्निधान मात्र के जड़वत् में बेटा! रचना की प्रवृत्ति उत्पन्न नहीं हुआ करती है तो इसीलिये मेरे पुत्रो! देखो, यह जो प्रकृति है नाना प्रकार के व्यंजनों वाली है इसमें जो नाना प्रकार का व्यंजन उत्पन्न होता है। वह बिना ब्रह्म के सन्निधान मात्र के नहीं हुआ करता है। इसीलिये आज हमें विचारना है, कि मुनिवरो! देखो, वेद के एक-एक मन्त्र के ऊपर हमें प्रायः अपने में अनुसंधान करना है। अपने में

अनुरूप को बनाना है जिससे मुनिवरो! देखो, ब्रह्मचरिष्यामि बनकर, हम वास्तव में मृत्युंजयी बन जायें। क्योंकि प्रत्येक मानव की एक आकांक्षा रहती है। मेरी प्यारी माता भी वही चाहती रहती है कि मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। मुझे मुत्युंजयी बनना है और मृत्यु से पार होना है। जो संसार में मृत्यु से पार होना चाहता है वह मानो देखो, ब्रह्मचरिष्यामि बने और ब्रह्मचरिष्यामि बनकर के मानो देखो, गौमेध याग का यहाँ वर्णन आता रहता है। गौमेध याग के भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप माने गये हैं। गौ कहते हैं बेटा! इन्द्रियों को। गौ नाम का पशु भी होता है। परन्तु गौ नाम पृथ्वी को भी कहा गया है मानो देखो, जहाँ हम "गौ वृत्तं ब्रह्मचरिष्यामि।" बेटा! ब्रह्मचारी जब विद्यालय में प्रवेश करता है, तो मुनिवरो! देखो, वह गौमेध याग मानो आचार्य किया करता है। मेरे प्यारे! देखो, "मेधं ब्रह्माः" उसे वह अपनी इंन्द्रियों को, अपने में धारण करके उसे मेधावी बना देता है। और वह जब मेधावी बन जाता है, मुनिवरो! देखो, वही मेधावी अपने को ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम जो भाग है मानव का, ब्रह्मचर्य है। वह ब्रह्म को जानना, प्रकृति के अवययों को जानकर के हमें नाना प्रकार के विज्ञानमयी, अपने जीवन को बनाकर के, मेरे पुत्रो! देखो, वह ब्रह्मज्ञान की प्रतिभा में रत हो जाये।

गृहपथ्य

उसके पश्चात् द्वितीय जो जीवन है, वह गृह आश्रम कहलाता है, जिसको गृहपथ्य नाम की अग्नि के पूजन का बेटा! जहाँ विवरण आता रहता है। हमारे यहाँ आज का एक वेद मन्त्र आ रहा था, वह उच्चारण कर रहा था "अग्नं गृहः रूद्रभागं मनवंचतं ब्रह्म लोकाम्" मेरे प्यारे! ये वर्णन आ रहा है कि गृह कैसे ऊँचा बनता है। प्रत्येक माता-पिता यह चाहते हैं कि हमारा गृह स्वर्गमय बन जाये। हमारे गृह में अन्धकार न रहकर के प्रकाश आ जाये, तो मुनिवरो! देखो, वह प्रकाश कैसे आता है? अन्धकार को कैसे नष्ट करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, जो ब्रह्मचर्य में वास करता हुआ वह जब गृह में प्रवेश करता है और गृह में जब वो गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करता है।

पूजन का अभिप्राय यह है कि वह अग्नि का सदुपयोग करना है। पूजन का एक ही अभिप्राय आता है हमारे आँगन में कि प्रत्येक मानव को पूजा करनी है। पूजा का एक ही अर्थ माना गया है, कि उसका सदुपयोग करने का नाम पूजा है। जैसे हम परमपिता परमात्मा की पूजा करना चाहते है। परन्तु परमपिता परमात्मा ने जो सृष्टि का निर्माण किया है, जो सृष्टि का निर्माणवेत्ता है अथवा पालन करने वाला है, हम उस परमपिता परमात्मा के गुणाधानम्, उसके गुणों को अपने में धारण करते हुए और उसे हम अपने गृह रूपों में, पालन करते हुए गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! जैसे एक मानव, जल का पूजन करना चाहता है तो जल का सदुपयोग करने का नाम मानो उसकी पूजा है; जैसे एक कृषक है वह कृषक मुनिवरो! देखो, अपनी कृषि में जल का प्रहार कर देता है। वह जल से जब सिंचन करने लगता है। तो वही आपोमयी ज्योति बनकर के बेटा! अमृत को प्रदान करती रहती है। मानो वही प्राणसत्ता को प्रदान करके कृषक की भूमि देखो, पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बनकर मुनिवरो! देखो, नाना प्रकार के अन्नाद खाद्य और खनिज पदार्थो को प्रदान कर देती है। परिणाम यह है कि वो आपोमयी ज्योति मानो देखो, वो जल का सदुपयोग है तो हमें जल का, क्या प्रत्येक वस्तु के सदुपयोग के ऊपर विचार-विनिमय करना है। मेरे प्यारे! देखो, आज मैं विशेष विवेचना नहीं, जो ऋषि मुनियों ने अपने जीवन के मानो देखो, कुछ समय भयङ्कर वनों में व्यतीत करके जो मन्थन किये हैं।

गाहर्पथ्य

आज बेटा! मैं तुम्हें उनके विचारों को प्रकट कर रहा हूँ। और वह प्रकट क्या है? मेरे पुत्रो! देखो, ऋषियों ने वेद के आचार्यों ने मन्थन करते हुए कहा कि गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करना है। प्रत्येक माता-पिता ये चाहते हैं कि हमारा गृह स्वर्ग बन जाये। बेटा! वो स्वर्ग उस काल में बनता है, जब भी माता-पिता अपने जीवन में कर्मठ बन जाते हैं। माता पिताओं के हृदयों में मानो ज्ञान रूपी अग्नि जागरूक हो जाती है। गृह में जब व्यवहार-भानु पवित्र हो जाती है। मेरे पुत्रो! देखो, माता-पिता दोनों महान दर्शनों का जब अध्ययन करते हैं। याग, यज्ञ इत्यादियों में अपने को ले जाते हैं। देव पूजा में और ब्रह्मयाग में परिणत हो जाते हैं। तो बाल्य-बालिका उन्हीं के अनुसार मानो देखो, गृह को बरतने लगते हैं। जब गृह में उसी प्रकार का क्रियाकलाप हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, गृह स्वर्ग बन जाता है। यदि कलह का साम्राज्य हो गया है गृह में, तो गृह मानो एक शमशान भूमि के तुल्य बनकर के रहेगी। यदि गृह में मानो देखो, वातावरण पवित्र हो गया है, याग, यज्ञ इत्यादियों में अग्नि की पूजा करने से महान बन गया है। तो गृह वास्तव में स्वर्ग बनेगा, और जहाँ स्वर्ग है, वहीं मृत्यु से पार होने के लिये मानव प्रयास करता रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, मुझे वो काल स्मरण आता रहता है जिस काल में देखो, यहाँ नाना ऋषिवर अपने में अनुसन्धान करते रहे हैं, मानो देखो, राजाओं के यहाँ बेटा! देखो, अपनी प्रतिभा बनाते रहें हैं।

मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा है कि मेरे प्यारे! वो काल, जब मैं माता मल्दालसा के उस काल में प्रवेश करता हूँ, जहाँ वो मानो देखो, अग्नि की पूजा करती रहती थी। मेरे पुत्रो! देखो, माता मल्दालसा का जीवन प्रायः हमें स्मरण आता रहता। यहाँ नाना माताओं के रूपों का जो वर्णन आता है तो मेरे पुत्रो! देखो, गृहपथ्य नाम की अग्नि हमारे समीप आ जाती है।

राजा मनुवृत्ति व माता मल्दालसा

मेरे प्यारे! देखो, भगवान् मनु के वंशलज में एक मनुवृत्ति राजा हुए हैं। मुनिवरो! देखो, राजा मनुवृत्ति के माता पिता सन्यास को प्राप्त हो गये, वानप्रस्थ को चले गये। राजा के हृदय में राज्य स्थापना की वृत्तियों में परिणत हो गया। एक समय भ्रमण करते हुए बेटा! महर्षि पनपेतु मुनि महाराज आश्रम में जिनके विद्यालय में नाना प्रकार के ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहे। माता मल्दालसा बाल्यकाल में ही अपने में अध्ययनशील थी। मेरे प्यारे! देखो, उनका वेदोच्चारण अथवा उनके जो क्रियात्मकता के जीवन की धाराएँ हैं वह राजा ने स्वीकार कीं। उन्होंने राजा से प्रार्थना की, भगवन्! यह जो तुम्हारे आश्रम में कन्या अध्ययन करती है इस कन्या का मेरे से मानो मैं आप से भिक्षा प्राप्त करना चाहता हूँ, मेरे गृह को ऊँचा बनाने वाली यह देवी हो सकती है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि तुम कन्या से ही ये प्राप्त करो कि ये तुम्हारे गृह में जाने योग्य है अथवा नहीं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब माता मल्दालसा के समीप राजा पहुँचे तो उन्होंने मन ही मन में नमः किया और उन्होंने कहा कि देवी! मेरी इच्छा ऐसी है कि मैं तुम्हें अयोध्या में, उस गृह में सुशोभित चाहता हूँ जहाँ मानो देखो, अयोध्या में नाना मनुवंश में राजा हुए और मैं भी मनुवंश का एक बाल्य हूँ मेरी इच्छा यह है कि तुम्हारा हमारा दोनो का संस्कार हो जाये। मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालसा ने नत् मस्तक होकर कहा राजन! मुझे स्वीकार है। परन्तु मैंने वेदोक्त कुछ प्रतिज्ञाएँ की हैं। उन प्रतिज्ञाओं को यदि तुम स्वीकार करो तो मैं अपने में प्रसन्न हूँ। उन्होंने कहा कौन-कौन सी प्रतिज्ञा हैं?

माता मल्दालसा की प्रतिज्ञाएँ

माता मल्दालसा ने कहा कि मैंने ये प्रतिज्ञा की है वेद के मन्त्रों का अध्ययन करते हुए मैं ये प्रतिज्ञित बनी हूँ कि पाँच वर्ष तक ब्रह्मचारी को मेरी शिक्षा होनी चाहिए। गर्भ से लेकर के, पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी या

ब्रह्मचारिणी मेरी ही शिक्षा में पनपने वाला हो। राजा ने बेटा! वो स्वीकार कर लिया। द्वितीय उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा वर्णित की, कि द्वितीय प्रतिज्ञा मेरी ये है कि यदि मेरे वाक्यों को राजा ने समाप्त कर दिया तो मैं उसके पश्चात गृह से मेरा कोई तारतम्य नहीं रहेगा। और मैं बारह वर्ष के पश्चात अपने शरीर को चितांजली दे दूँगी। मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालसा के इन शब्दों को राजा ने स्वीकार कर लिया। मेरे प्यारे! देखो, जब राजा ने स्वीकार किया तो महाराजा पनपेतु मुनि महाराज ने उन दोनों का संस्कार किया। और संस्कार करने के पश्चात मानो देखो, वह देवत्तम् देव संस्कार होने के पश्चात अयोध्या को उन्होंने गमन किया और जब अयोध्या में प्रवेश हो गया तो अयोध्या में एक आनन्द की तरंगें ज्योति रूप में प्रकट होने लगीं। सब प्रजाओं ने बड़ा अवृत्त किया। मेरे प्यारे! घर में उनका वास हो गया। मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि मेरे प्यारे! कुछ समय के पश्चात मुनिवरो! देखो, माता मल्दालसा के गर्भस्थल में एक आत्मा का प्रवेश हुआ। जब आत्मा का प्रवेश हुआ तो वह मेरे प्यारे! अपनी आत्मा से चर्चा करती रहती थीं। उस आत्मा से विवेचना, आत्मा से आत्मा का मिलान जो माता जानती है। वह मेरे प्यारे! गृह-सूत्र को अपने में धारण कर लेती है।

गृह-सूत्र

मुझे स्मरण आता रहता है महर्षियों का वचन, मेरे प्यारे! भगवान मनु के काल से भी पूर्व एक महर्षि तन्तुत ऋषि महाराज हुए हैं, जिन्होंने बेटा! देखो, वेद के मन्त्रों को लेकर गृह-सूत्रों का निर्माण किया। वे गृह-सूत्र मेरे पुत्रों! देखो, मेरी पुत्रियों को अध्ययन करना चाहिए। माताओं को अध्ययन, ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्मचारियों को भी अध्ययन करना चाहिए, उसीके आधार पर मानो अपने जीवन को व्यतीत करना चाहिए।

तो माता मल्दालसा आत्मा से अपनी वार्ता प्रकट कर रही थी। वो कहती थी बुद्धो, शुद्धो निरंजनाः मेरे प्यारे! ये तीन शब्द हैं, मानो देखो, तीनों में ही यह संसार व्याप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! बुद्ध, शुद्ध, निरंजन, मुनिवरो! देखो, बुद्ध कहते हैं बुद्धिमान को, शुद्ध कहते हैं पवित्र को, और निरंजन कहते हैं बेटा! देखो, जो सदैव रहने वाला है, जिसकी मृत्यु नहीं हुआ करती है। तो बुद्ध, शुद्ध और निरंजनोऽसि यह माता की एक रचना रहती और वो कहती रहती कि बुद्धं ब्रह्माः, हे बुद्ध! शुद्धं ब्रह्माः, तू शुद्धो वृद्धम् मानो देखो निरंजनोऽसि से यह उच्चारण करती रहती, मेरे प्यारे! इनकी विवेचना होती रहती और रात्रि समय जब माता शैय्या पर विराजमान होती तो उस समय आत्मा का आत्मा से मिलान करती रहती थी और यह कहती हे आत्मा! तू बड़ी विचित्र है। हे आत्मा! तूने मेरे में सह वास किया। तेरा आसन क्या है? तेरा ओढ़न क्या है? हे आत्मा! तू शरीर में वास करके क्या-क्या तेरा ओढ़न है? तो माता उसकी विवेचना करती रहती, "आपो हिरण्यं ब्रह्माः आपो द्यु प्रमाणं ब्रह्मे" मेरे प्यारे! वह कहती कि आपो ही तो तेरा आसन है, आपो ही तेरा ओढ़न है, आपो ही तेरे पासे बने हुए हैं। आपोमयी ज्योति में तू रत रहने वाली आत्मा है। तू ऐसे आँगन में रमण करती रहती है जिसे हम जान भी नहीं पाते। तो मेरे प्यारे! माता इस प्रकार की शिक्षा देती रहती।

गर्भस्थ आत्मा को शिक्षा

वह गर्भस्थल में जो शिशु विद्यमान है, मेरे प्यारे! जिसका पंचीकरण हो रहा है वह त्रिवृत्तो में रत रहकर के उसके संस्कार बन गये। मानो देखो, माता मल्दालसा जब इस प्रकार की बाल्य को शिक्षा देती रही। जब वह माता के गर्भ से पृथक् होता है बालक तो लोरियों का पान कराती हुई ये उच्चारण करती रहती है, हे आत्मा! तू तो सदैव रहने वाली है। तेरा ह्रस नहीं होता, तेरी मृत्यु नहीं होती। मानो तू तो ज्ञानमयी स्रोत है। मानो देखो, तू सदैव प्रकाश में रहती है। बुद्धिमान है क्योंकि नाना प्रकार की जो बुद्धियों का निर्माण होता है वो तेरी आत्मचेतना से हुआ करता है। मेरे पुत्रो! देखो, वह विवेचना करती रहती जैसे परम ब्रह्म परमात्मा जिसे

ब्रह्म कहते हैं उसका सन्निधान प्रकृति से होता है और प्रकृति से होते ही नाना प्रकार के व्यंजनों वाली यह पृथ्वी बन जाती है। नाना प्रकार के व्यंजनों से इसको सजातीय बना देती है। इसी प्रकार हे "आत्म ब्रह्मे लोकाम्" मानो यह प्रकृति ही अपने रूप में रत रहने वाली है।

तुम्हें यह प्रतीत है कि मन प्रकृति का सूक्ष्मतम तन्तु माना गया है परन्तु इसी से चार प्रकार की बुद्धियों का निर्माण होता है। जब मन से मन का सन्निधान होता है तो मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञा और मेधावी मानो ये चार प्रकार की बुद्धियों का निर्माण होता है। मेरे प्यारे! देखो, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार बेटा! देखो, चित्रं रथं ब्रह्मा मुनिवरो! देखो, चित्र उसे कहते हैं जहाँ जन्मजन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान होते हैं। हे आत्मा! तू जब मेरी लोरियों से पृथक् होगा और जब तू मेरे ब्रह्मज्ञान का अध्ययन करता हुआ, तेरा कर्तव्य है कि तू अपने चित्त के ऊपर अध्ययन करने वाला बन क्योंकि ये जो चित्त है इसमें नाना जन्म जन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान होते हैं, इस चित्त के मण्डल को जानकर के तुझे अहङ्कार की अवस्था को प्राप्त करना है।

हे "विचारं ब्रह्मे" एको ब्रह्मा एक दूसरे सूत्र में समाहित होगा। मेरे प्यारे! माता मल्दालसा इस प्रकार की ब्रह्मचारी को शिक्षा दे रही है। ब्रह्मचारी को अपने में बुद्धिमान बना रही है, मेधावी बना रही है। तो मेरे पुत्रो! देखो, माता का कितना सहयोग है। हे माता! जब तू अपने पुत्रों को इस प्रकार निर्माणित कर देती है, हे माता! ये मानो देखो, सर्वत्र जगत एक ब्रह्मवेत्ताओं का बन जायेगा। मेरे पुत्रो! देखो, माता मल्दालसा का पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी जब ब्रह्मवेत्ता हो गया, पाँच वर्ष का होते ही वह कहता है माता मुझे आज्ञा दीजिये। माता मल्दालसा कहती है, कहाँ जाना है? उसने कहा माता! ये मैं नहीं जानता कि कहाँ जाऊँगा? परन्तु मेरे हृदय की प्रबलता बलवती हो गयी है कि मैं तप करने जा रहा हूँ। मैं तपस्वी बनना चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे! पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी तपस्या के लिये गमन करता है। तो माता अपने में हर्ष ध्वनि करती है और माता कहती है मेरा जीवन सफल हो गया है क्योंकि मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला पुत्र इस संसार के व्यापार में संलग्न न रहा, वह ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म की खोज में, ब्रह्म की आभा में रत हो गया है। मेरे प्यारे! माता मल्दालसा अपने में हर्ष ध्वनि कर रही है।

तप

तो ब्रह्मचारी जब तप के लिये जाने लगा तो माता मल्दालसा ने कहा ब्रह्मचारी! मैं यह जानना चाहती हूँ कि तप किसे कहते हैं? उन्होंने कहा माता! मैं नहीं जानता कि तप किसे कहते हैं? माता मल्दालसा ने कहा कि उग्र क्रिया का नाम तप कहा जाता है। तुम्हारे हृदय में ब्रह्म की जिज्ञासा जागरूक हुई है। संसार के नाना प्रकार के काम, क्रोध, लोभ वाले मानो तूने जगत को त्याग दिया है। और त्याग करके तू परमपिता परमात्मा के आनन्दमयी रहस्यतम अपने को वृत्तियों में लाना चाहते हो, जाओ, ब्रह्मचारी तपस्यं ब्रह्माः उग्र क्रिया का नाम तप है जैसे मेघों से वृष्टि हुआ करती है मेघों में जब विद्युत गमन करती है और मेघ को अपने मानो वज्र से जब भिन्न-भिन्न कर देते हैं तो उग्र क्रिया का नाम भी वृष्टि कहलाता है। मानो देखो, जब दर्शन में यह पृथ्वी तपा करती है तो सूर्य की किरण अपने में उग्र रूप धारण करके इस पृथ्वी को तपा देती है ये नाना प्रकार के व्यंजनों वाली मानो देखो, ये पृथ्वी बन जाती है। तो मेरे पुत्रो! जब माता मल्दालसा ने ब्रह्मचारी को यह उपदेश दे दिया, वह नतमस्तक हो करके और चरणों की वन्दना करता हुआ बेटा! वहाँ से गमन करता हुआ वह भयङ्कर वन में जा पहुँचा।

माता के गर्भस्थल में बेटा! जब द्वितीय आत्मा का प्रवेश हुआ तो उस आत्मा से भी इसी प्रकार की वार्ता प्रकट करती रही, वह कहती हे आत्मा! "अखण्डं ज्योति ब्रह्मः लोकां ब्रहे" हे आत्मा तू तो अखण्ड ज्योति

है और ऐसी आनन्दमयी ज्योति है जो सदैव प्रदीप्त रहती है वह शान्त नहीं होती। हे आत्मा! तू आत्म ज्योति है। तू मानो ब्रह्म से सहायता पा करके तू ब्रह्म को अपने में धारण करने लगती है। मानो इस प्रकार आत्मा का उपदेश देते हुए गर्भस्थल में बेटा! जो इस प्रकार का माता उपदेश दे रही है।

विवेक

इसके पश्चात जब वो संसार में, इस पृथ्वी मण्डल पर आ गया, उससे कहती है हे बालक! तू पृथ्वी की गोद में आ गया है। तू वसुन्धरा की गोद में आ गया है। ये कैसी वसुन्धरा है जिसमें सर्वत्र ब्रह्माण्ड की प्रतिभा निहित रहती है। जो मानो नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान के तन्तुओं का जन्म होता है ये वही वसुन्धरा कहलाती है। हे बालक! तू माता जननी के गर्भ से पृथक् होकर के इस माता पृथ्वी के गर्भ में आ गया है। अब यही तुझे खाद्य, खनिज पदार्थों का प्रदान करती है। यही बेटा! विवेक है। जब तू इससे पृथक् हो जायेगा तो वह जो परमपिता परमात्मा जो सर्वत्र जगत का नियन्तता है वही तो मानो तुझे आनन्द अपनी लोरियों का पान करायेगा। वहाँ ज्ञान रूपी लोरी है वहाँ खाद्यान्न लोरियाँ हैं। और माता की लोरियों का पान करता हुआ तू देखो, ब्रह्मवेत्ता बनने की इच्छुकता में लग, मेरे प्यारे! देखो, माता जब इस प्रकार का उपदेश दे रही है।

ब्रह्मवेत्ता द्वितीय बाल्य

वह बालक भी पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी माता से कहता है माता मुझे आज्ञा दो, मैं ब्रह्मवेत्ता, मैं तपस्या करने जा रहा हूँ। मेरे प्यारे! माता मल्दालसा ने कहा हे बालक! मैं जानना चाहती हूँ, ये तपस्या (का ज्ञान) तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई है। उन्होंने कहा माता तुमने ज्ञान दिया है और ज्ञान की जो उग्र रूप धारा जो ज्ञान ने किया है मेरी अन्तरात्मा के सहयोग से मानो देखो, वह यह शब्द वहाँ से इसकी उपलब्धि होती है। यही तो इसकी उपलब्धियाँ कहलाती है। आज मेरा अन्तरात्मा प्रसन्न है, माता! तूने मुझे ब्रह्मवेत्ता बनाया है। मैं इस संस्कार के अव्ययों में रत रहना नहीं चाहता जहाँ किसी का अपमान होता है तो किसी का मान हो रहा, कोई अपमानित हो रहा है। मैं मान और अपमान दोनों से रहित होकर के और वह जो चेतना है जो इस संसार को, और मुझे धारण किये हुए है, उसकी गोद में मैं जाना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, माता बड़ी प्रसन्न हुई, माता ने कहा धन्य है ब्रह्मचारी! मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न है। मेरे प्यारे! देखो, वह भी तपस्या के लिये चला गया।

माता मल्दालसा का तृतीय गर्भ

विचार आता रहता है, तृतीय आत्मा का, माता के गर्भ में जब प्रवेश हुआ तो माता उसे ये उपदेश देती रहती कि हे आत्मा! मेरे शरीर में तूने वास किया है। तू कहाँ से आया है? तू कौन से चित्त मण्डल से आकर के मेरे हृदय में प्रवेश हो गया है? हे आत्मा! हे बालक! तू मेरा हृदय है। हे आत्मा! तू चेतना है, मानो देखो, तू नाना प्रकार के अवगुणों से पृथक् रहता है। "आत्म ब्रह्माः लोकाम्" मेरे प्यारे! देखो, आत्मा के कारण ही नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों का निर्माण होता है। मेरे प्यारे! देखो, भूः भुवः स्वः ये तीन प्रकार की आभाओं का जन्म होता रहता है। जिसमें बेटा! तीन प्रकार के परमाणु गति करते रहते हैं। उन्हीं परमाणुओं से मानो देखो, उन्हीं परमाणुओं का जब सङ्घर्ष होता है तो वह तरङ्गे उद्बुद्ध होकर के मानव के जीवन को संचालित करती रहती हैं। मेरे पुत्रो! देखो, वही तो विज्ञान अपनी आभा में गति करता रहता है। नेत्रों की प्रतियों में रत हो करके वह एक प्रकाश का मूलक बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, माता अपने ब्रह्मचारी को गर्भ में यह शिक्षा दे रही है। और वह कहती है ब्रह्मचारी! तू संसार के भौतिक विज्ञान को जान करके तुझे आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना है। आध्यात्मिक विज्ञान में तुझे रत रहना है। तो मेरे पुत्रो! जब इस प्रकार की शिक्षा माता प्रदान कर रही है। जब वह मुनिवरो! माता के गर्भ से पृथक् होता है बाल्य तो उस समय कहती है "आत्मा ब्रह्मे" हे आत्मा! तू ब्रह्म को

जान। मेरे प्यारे! देखो, जब वह भी पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता बन गया तो वह भी बेटा! ऐसा मुझे स्मरण है, ऐसा साहित्य कहता है कि बेटा! वह भी भयङ्कर वन को चला गया।

राजा की चिन्ता

तीन ब्रह्मचारी जब ब्रह्मवेत्ता बन गये। अब राजा को यह चिंता हुई कि मेरा राष्ट्र कैसे चलेगा? जब तीन-तीन ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता बन गये हैं। अब मेरा राज्य कैसे चल पायेगा? ये तो तभी चलेगा जब राष्ट्रीयवेत्ता का जन्म होगा। मेरे प्यारे! जब माता के गर्भस्थल में चतुर्थ ब्रह्मचारी की आत्मा का प्रवेश हुआ तो बेटा! राजा ने उस माता ब्रह्मे मल्दालसा से कहा हे देवी! हे ब्रह्मे! मैं नहीं जान पा रहा हूँ राष्ट्र का वेत्ता कौन बनेगा? उन्होंने कहा प्रभु मैं नहीं जानती। मैंने तो यह प्रतिज्ञा की थी। उन्होंने कहा देवी! मेरी इच्छा यह है कि एक बालक तुम्हारे गर्भ से देखो, राष्ट्रीय बन जाये तो वह अयोध्या का भी अधिराज बनें। मेरे प्यारे! माता मल्दालसा ने कहा राजन! ऐसा ही होगा। परन्तु अब मैं संसार की प्रतिभा में रत नहीं रहूँगी। मेरे प्यारे देखो, उस बालक को कोई शिक्षा नहीं दी, रात्रि अन्न को ग्रहण करती थी। उन्ही विचारों में पनपता रहा। बालक गर्भ से पृथक् हो गया परन्तु राष्ट्रीय विचारों में वो पनपता रहा। पनप करके "ब्रह्मा व्रतं देवाः" बेटा! वो ब्रह्मचारी मानो राष्ट्रीय विचारों की धारणा करता रहा। मुनिवरो! देखो, माता मल्दालसा का जीवन व्यतीत होता रहा, जब ब्रह्मचारी बारह वर्ष का हो गया।

माता मल्दालसा का ब्रह्मलीन होना

बारह वर्ष का होते ही मुनिवरो! माता मल्दालसा और राजा और वह ब्रह्मचारी मुनिवरो! एक स्थली पर विद्यमान हो गये और माता मल्दालसा ने कहा राजन अब मैं अपने इस शरीर को त्याग रही हूँ। राजा ने कहा देवी! आप जा रही हैं तो मेरा क्या बनेगा? उन्होंने कहा प्रभु मैं नहीं जानती, मैंने आचार्य कुल में यह प्रतिज्ञा की थी कि अपने पुत्रो को, अपने सन्तान को ब्रह्मवेत्ता बनाना चाहती हूँ। परन्तु एक राजा बना मेरी प्रतिज्ञा भिन्न हो गयी। मेरी प्रतिज्ञा का विनाश हो गया है। अब मानो देखो, मैं इस प्रतिज्ञा को नहीं त्याग सकती। मैं अपने में दृढ़ हूँ और मैं अपने शरीर को त्याग रही हूँ। बेटा! राजा अपने में मौन हो गया और ब्रह्मचारी के एक वसीयत, एक लेखनी बद्ध करके कण्ठ में धारण की और गायत्री छन्दों का पठन-पाठन किया। वेद मन्त्रों की ध्वनियाँ करने लगी और उन्होंने अपने प्रभु से नमस्कार करते हुए बेटा! शरीर को त्याग दिया। आत्मा चला गया। मेरे प्यारे! देखो, राजा भी और ब्रह्मचारी भी अपनी वृत्तियों में रत हो गये परन्तु देखो, उसका दाह कर दिया। दाह करने के पश्चात् मेरे प्यारे! वह ब्रह्मचारी राजा बना। कुछ समय के पश्चात मनु वंश के जो राजा थे वह भी भयङ्कर वन में तपस्या के लिये चले गये और वह उस अयोध्या का राजा बना।

संस्कारों का जीवन पर प्रभाव

हमारे यहाँ यह माना है कि सबसे प्रथम यदि किसी नगरी का निर्माण हुआ है तो बेटा! वो अयोध्या है, भगवान् मनु ने जिसका निर्माण किया। मेरे प्यारे! अयोध्या का निर्माण भगवान् मनु ने किया है। क्योंकि मनु वृत्तियों में "ब्रह्माः वाचः देवाः" मेरे प्यारे! देखो, हजारों मनु वंशज ने बेटा! अयोध्या में राज किया। आज मैं बेटा इस सन्दर्भ में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ विचार-विनिमय केवल यह मुनिवरो! जब वह राजाधिराज बन गया। राजा के पुत्र भी होने लगे। पौत्र भी हो गये। अब वो राजस्थली को नहीं त्याग रहा। मेरे प्यारे! देखो, वो तीन सन्यासी जो महापुरुष थे। वे ऋषिवर एक समय भयङ्कर वन में विराजमान थे। विचारने लगे कि अयोध्या में तो बड़ा एक पापाचार हो रहा है। मुनिवरो! उन्होंने कहा भगवन्! क्या हो रहा है? कि राजा सन्यास और तपस्या को नहीं जा रहा है राष्ट्रीय प्रणाली का विनाश होने जा रहा है। मानो ऐसा कोई यत्न किया जाये जिससे यह राजा

सन्यास ले ले और अयोध्या में देखो, उसका पुत्र राज का अधिकारी बन जाये। जो हमारे वंश की परम्परा है अथवा जो भी नियमावली है वो इसी प्रकार बनी रहे। तो मेरे पुत्रो! यह विचार करते हुए वे तीनो सन्यासी राजा के समीप आये, राजा ने अपनी स्थली को त्याग दिया और राजा ने कहा कहो भगवन! आज कैसे आगमन हुआ है मुनिवरो का? मेरे प्यारे! उन्होंने एक स्वर में कहा हे राजन! इस राष्ट्र को त्यागो, अपने जेठे पुत्र को राज्य दे करके भयङ्कर वन में तपश्चर बनो। उन्होंने कहा यह मुझे स्वीकार नहीं है। मुझे राष्ट्र बहुत प्रिय लग रहा है। मैं इस मायावाद में रत हो गया हूँ मुझे यह बहुत प्रियतम है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों की वार्ता को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। बेटा! देखो, द्वितीय राजा से उनका सम्मिलन हुआ। एक दूसरे राजा से मिलकर के उस राजा पर आक्रमण कराया तो बेटा! देखो, वह "आक्रमणं ब्रह्मः" वह राजा अधिराज बन गया, जिन्होंने आक्रमण किया था। उसको कारागार में स्थिर कर दिया।

आपत्तिकाल में विवेक जागृति

जब वे कारागार में चले गये तो मुनिवरो! कारागार में, मानो आपत्ति काल होता है, मानव के संस्कार जागरूक होते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के संस्कारों की उपलब्धियाँ होने लगती हैं। जब मुनिवरो! देखो, उन्हें विचार आया कि माता मल्दालसा, जब शरीर को त्यागने लगीं तो मेरे कण्ठ में एक वसीयत उन्होंने दी थी तो बेटा! उन्होंने उस वसीयत मानो देखो, लेखनी को अपने सम्मुख किया तो मुनिवरो! देखो, उसमें एक ही शब्द था माता का, कि हे पुत्र! यह संसार निस्सार है, इसमें कोई सार नहीं है पुत्रवत्। इस शब्द को ग्रहण करते ही मुनिवरो! उसके संस्कार जागरूक हो गये और उन्होंने कारागार के कर्मचारियों से कहा जाओ, राजा से कहो कि वह स्वीकार कर रहे हैं सब वार्ता, मैं इस काल-आवृत्तियों से दूरी रहना चाहता हूँ, मेरे प्यारे! देखो, वह वार्ता राजा तक पहुँची। राजा सन्यासियों के सम्मुख पहुँचे। उन्होंने कहा हे ऋषिवर! देखो, वह राजा बड़ा व्याकुल हो रहा है। वो सन्यास के लिये तत्पर हो गया है। मेरे प्यारे! देखो, वह जब कारागार के निकट आये उन्होंने चरणों को स्पर्श किया। उन्होंने कहा कि माता ने जो वार्ता मुझे प्रगट की है, मुझे जो वसीयत दी है, मैं उसे स्वीकार कर रहा हूँ। ये जो राष्ट्र मानो देखो, मैं भयंकर वन को जा रहा हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, वो भयङ्कर वन को तपस्या के लिये चले गये और पुत्र को अधिराज बनाया। और महापुरूषों ने मेरे पुत्रो! राष्ट्र को राज्य वृत्तियों में परिणत करके बेटा! वे भी भयङ्कर वन में चले गये।

राष्ट्र की प्रणाली

विचार मैं क्या दे रहा था। बेटा! देखो, गृह वो कहलाता है। जिस गृह में त्याग की प्रवृति बनी रहे, गृह वो ही प्रियतम है वह गृहपथ्य नाम की अग्नि कहलाती है। गृहपथ्य नाम की अग्नि का अभिप्राय यह है कि माता तपस्वी है, पिता भी तपस्वी बना हुआ है। मुनिवरो! उसके पश्चात जब गृह आश्रम में जेठा पुत्र उत्पन्न हो जाये, तो उसे राज को या गृह की सम्पत्ति को प्रदान कर देनी चाहिए। यह ऋषि-मुनियों की नियमावली बनी हुई, निर्माणित की हुई थी। उसके पश्चात् देखो, वानप्रस्थ लेना, राजाओं के यहाँ एक नियमावली बनी हुई है परम्परागतों से कि कन्याओं की शिक्षा भिन्न हो और ब्रह्मचारियों की शिक्षा भिन्न होती है। मेरे पुत्रो! यह भगवान मनु के काल से लेकर के वर्तमान के काल तक उसके अवशेष प्राप्त होते रहते हैं। वह गृहस्वामिनी विद्यालयों में ब्रह्मचारिणियों के विद्यालयों में ऊँची शिक्षा, और वानप्रस्थ जब विद्यालयों में ऊँची शिक्षा प्रदान करते हैं, अपने अनुभव को देते हैं, याग इत्यादि करने में वो संलग्न रहते हैं। बेटा! देखो, वह जो विदुषी है वह विद्यालय में ब्रह्मचारिणियों को विदुषी बनाती है। अपने अनुभव और देखो, सह शिक्षा को प्रदान कर देती है, तो ब्रह्मचारिणियों अपने कर्तव्य का पालन करती हुई याग इत्यादियों में बेटा! संलग्न होकर के और गृह-सूत्रों को

अपनी माला के रूप में अपने कण्ठ में धारण करने लगती है। मेरे प्यारे! इसी प्रकार विद्यालयों में जब ब्रह्मचारी अध्ययन करता रहता है, गाहर्पथ्य नाम की अग्नि का पूजन करता हुआ, अपने में महान तपश्चर बन जाता है। तो विचार-विनिमय क्या? आज मैं बेटा! तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देता जा रहा हूँ कि हमारे ऋषि-मुनियों ने सृष्टि के प्रारम्भ में एकत्रित होकर के यह नाना प्रकार की नियमावलियों का निर्माण किया है। उन्हीं नियमावलियों में जब मानव अपने में रत रहता है तो यह गृह स्वर्ग बन जाता है। आसन और राष्ट्र भी स्वर्ग बन जाता है। राजा अपने में सौभाग्यशाली अपने को स्वीकार करता रहता है।

गाहर्पथ्याग्नि

विचार यह है कि माता मल्दालसा की यह गाथा इसलिये प्रकट की कि माता जब गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करती है पितर भी जब गृहपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करता है तो बेटा! उसके पश्चात् आह्वन्य अग्नि में प्रवेश हो जाता है। आह्वन्य अग्नि उसे कहते हैं जहाँ मेरे प्यारे! देखो, विद्यालयों में शिक्षा प्रदान की जाती है। वह विद्यालय बेटा! पवित्र बनते हैं क्योंकि अनुभव मेरे प्यारे! देखो, जब शिक्षा देने वाले अनुभवी होते हैं, अपने में चरित्र की प्रतिभा भी देते रहते हैं। नैतिकता उनके समीप रहती है, बेटा! ये गृह और आसन और राष्ट्र पवित्रता की वेदी में प्रवेश हो जाते हैं। तो विचार-विनिमय क्या? मुनिवरो! देखो, ऋषि मुनियों ने अपने में बेटा! इस प्रकार का विचार, इस प्रकार का वेद मन्त्रों से लेकर के उन्होंने एक भूमिका बनायी। एक माला बनायी है जीवन की, कि मानव का जीवन इस प्रकार व्यतीत होना चाहिए। मेरे प्यारे! जब वह वानप्रस्थ भी समाप्त हो जाता है। शिक्षा देने के योग्य नहीं रहेंगे, उसमें तपस्या का जीवन तो बन ही गया है। विद्यालय को त्यागकर के भयङ्कर वनों में अपने जीवन को अग्ने वस्त्र बना करके मेरे प्यारे! जैसे अग्ने वस्त्र होते हैं उसी प्रकार अपने मन, कर्म, वचन को अग्ने वस्त्र बना करके बेटा! वो तपस्या में परिणत हो जाते हैं। भयङ्कर वनों में जाकर के वो तप रहे हैं। परमात्मा से आत्मा की वार्ता प्रकट कर रहे हैं। अपने ज्ञान का मन्थन कर रहें हैं। मेरे प्यारे! देखो, परमपिता परमात्मा का जो दिया हुआ अनुपम ज्ञान है अथवा प्रकाश है, उस प्रकाश में अपनी पगडण्डी को बना लेते हैं और मोक्ष के लिये तत्पर हो जाते हैं।

त्याग की महिमा

तो विचार-विनिमय क्या बेटा! आज मैं तुम्हें विचार यह दे रहा था कि संसार में जब से मानव आता है मानव त्याग की प्रवृत्तियों में प्रवर्त्तित रहता है। और त्याग करता-करता वह बेटा! परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! विचार क्या, आज मैंने तुम्हें बेटा! सङ्क्षिप्त परिचय दिया है। और वह परिचय क्या है कि मानव का जीवन कैसा होना चाहिए। मानव के जीवन के सम्बन्ध में बेटा! इससे पूर्व काल में मैं तुम्हें यह विचार दे रहा था कि इस संसार के सम्बन्ध में बेटा! ऋषि मुनियों ने अपनी कल्पनाएँ की हैं, और भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पनाएँ की हैं। जैसा मुनिवरो! देखो, उन महापुरुषों ने बेटा! किसी ने इस संसार को विज्ञानशाला निर्माणित कहा है। मानो अपने जीवन को मोक्ष की पगडण्डी पर ले जाकर के मेरे प्यारे! अपने जीवन की प्रतिभा का निर्माण करना चाहिए।

वृद्धावस्था

आओ, मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार अब हमारा क्या कह रहा है? हमारा विचार यह कह रहा है कि हे मानव! तू अपने बाल्यकाल से और वृद्धकाल तक अपने जीवन को महान बनाता चल। क्योंकि वृद्धकाल कोई काल नहीं होता है। मानव का जीवन जब अस्वास्थ्य में परिवर्तित होता है तो उसको हमारे यहाँ वृद्धकाल कहते हैं। वास्तव में वृद्धकाल कोई काल नहीं होता, यह अशुद्ध कल्पना कही है। जब मानव अपने जीवन को

परमपिता परमात्मा ब्रह्मचर्य और त्याग और तपस्या से रहता है तो उस मानव का रूग्ण सूक्ष्म होते हैं। मानो देखो, उसे वृद्धपन नहीं आता है वह परमपिता परमात्मा को अन्तिम में प्राप्त हो जाता है।

यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुण गाते हुए बेटा! इस संसार सागर से पार हो जायें। हमारा एक ही उद्देश्य रहता है, कि हम संसार को जानते हुए, संसार में त्याग पूर्वक अपने जीवन में तपश्चर बनते हुए, उस परमपिता परमात्मा के आनन्दमयी, आनन्द रूपों को पान करना है जिससे बेटा! हमारा जीवन पवित्रता की वेदी पर विद्यमान होकर के हम संसार में अन्धकार को त्याग करके बेटा! प्रकाश में चले जायें। प्रकाश का नाम जीवन है अन्धकार का नाम मृत्यु है दोनों को त्याग करके बेटा! इस संसार से पार हो जायें। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। दिनांक 10.4.87, स्थान करनावल, मेरठ

२ वैदिक-विज्ञान ०५ ०२ १९८९

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं। और जितना भी ये जड़ जगत अथवा चेतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वो मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। हम उस परमपिता परमात्मा की महती और उसके अनन्तमयी जो यज्ञोमयी स्वरूप है, मानो उसकी महिमा का गुणगान गाते रहते हैं, उसका ज्ञान और विज्ञान इतना नितान्त माना गया है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ, जो उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सीमा से रहित हैं, वे सीमा में आने वाले नहीं हैं।

मानवीय-जिज्ञासा

तो इसीलिये हम उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहें हैं। क्योंकि मानव का कर्तव्य है कि वह अनुसन्धान करता रहता है, और उसके हृदय में एक विडम्बना जागरूक रहती है कि जितना भी ये सृष्टि चक्र है, मैं सर्वत्र को जानने वाला बनूँ। विज्ञानवेत्ता भी यही चाहता है और आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी यही चाहता है। परन्तु ब्रह्मवेत्ता भी यही चाहता है कि मैं संसार को परमपिता परमात्मा के जगत को, ब्रह्मसृष्टि को जानकर के, मैं अन्त में परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाऊँ। तो बेटा! सर्वत्रता का यही निर्णय रहा है और ये क्यों, इस प्रकार की पिपासा जागरूक रहती है? उनके हृदयों में एक आकांक्षा बनी हुई है कि मेरे जीवन में अन्धकार नहीं होना चाहिए, सदैव प्रकाश रहना चाहिए। वे प्रकाश के लिये सदैव विडम्बनित रहता है। और प्रकाश के जानने के लिये सदैव तत्पर रहता है। तो इसीलिये मानव के हृदय में यही आकांक्षा बनी हुई है कि मैं ब्रह्मवेत्ता बन जाऊँ, मैं ब्रह्म को प्राप्त हो जाऊँ, प्रकाश में चला जाऊँ, मेरी मृत्यु न हो, मैं मृत्यु से उपरान्तता को प्राप्त हो जाऊँ, ऐसी बेटा! प्रत्येक मानव की एक आकांक्षा बनी हुई है। तो वेद का मन्त्र कहता है कि यह आकांक्षा तो बनी रहनी चाहिए। क्योंकि मानव का जीवन विचारने के लिये तत्पर रहे और जब तक ये मनन और चिन्तन नहीं करता बेटा! ये मृत्यु से पार नहीं हो सकता। क्योंकि मृत्यु का उद्देश्य है कि प्रकाश हो जाये, अन्धकार न रहे। मेरे अन्तःकरण में जो नाना प्रकार का अन्धकार है, उससे

मैं दूरी हो जाऊँ।

तो बेटा! देखो, राजा भी यही चाहता है, प्रजा भी यही चाहती है। राजा के हृदय में यह आकांक्षा रहती है कि मेरा राष्ट्र सर्वोपरि बने, मेरे राष्ट्र में ज्ञान भी हो, विज्ञान भी हो। और नाना प्रकार के नवीन-नवीन आविष्कार होने चाहिए। मेरा आत्मा महान बने ऐसी राष्ट्रीय प्रणाली कहती है। और प्रजा भी यही चाहती है, हमारा राष्ट्र ऊँचा बने और हमारा गृह ऊँचा बने। मेरे प्यारे! देखो, ऊर्ध्वा के लिये प्रत्येक मानव अपने में ऐसी कल्पना करता रहता है। कि उसका अन्तःकरण एक समय बेटा! विशुद्धता को प्राप्त हो जाता है।

आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आज का हमारा वेद मन्त्र कुछ कह रहा था। परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ान उड़ता रहता है। और परमपिता परमात्मा का रचाया हुआ जो वेदज्ञ ज्ञान है बेटा! वह ज्ञान क्या कहता है? वेद की आख्यिका कहती है। ''चित्रो रथं ब्रह्मणं ब्रह्माः लोकां वायु सम्भवः'' मेरे प्यारे! यह आकांक्षा लगी रहती है कि मानो नाना प्रकार के उस चित्र रथ में परिणत हो जाऊँ जिस रथ में विद्यमान होकर के मैं मानो गतिवान होता रहूँ और अपने मानवीयता को ऊँचा बनाता रहूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं एक ऋषि के आसन पर तुम्हें ले जाना चाहता हूँ। आज मानो देखो, याग का एक वेद मन्त्र आता है ''यागां भूयश्चतं यागां रूद्रवस्तुः दिव्यां भावत्तं ब्रह्मे अदिति'' ऐसा वेद का मन्त्र कहता है कि हे यजमान तुम अपनी अदिति को प्राप्तकर। अदिति कहते हैं, जो प्रकाश को देने वाला है, वह कहता है, ''यज्ञं भवितां रथं दिव्यां देवो ब्रह्मणः'' और अपने पूर्वजों के द्वारा अपने रथ में विद्यमान होकर के तू द्यौ में गमन कर, ऐसा वेद का मन्त्र कहता है। तो बेटा! इस सम्बन्ध में नाना ऋषियों का विचार-विनिमय परम्परागतों से होता रहा है। परन्तु उद्यालक गोत्र में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो वहाँ कुछ विज्ञान की नवीन नवीन धाराओं का जन्म होता है। परन्तु जब भारद्वाज मुनि के आश्रम में प्रवेश करते हैं। तो वहाँ एक अनुपमता दृष्टिपात आती रहती है। तो आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, विशेषता में तुम्हें न ले जाता हुआ, केवल यह वाक् तुम्हें प्रगट कराना चाहते हैं कि हमारा जो मनोनीत जीवन है। वह उस अग्नि के सदृश है जैसे अग्नि प्रकाश को देती है। और प्रकाश को देकर के प्राण और ऊर्ज्वा प्रदान करती हुई मानव को पवित्र बना देती है।

उद्यालक गोत्रीय ऋषियों का विज्ञान

तो आओ, मेरे पुत्रो! मैं विशेषता में न जाता हुआ मैं सुकामकेतु उद्यालक गोत्र में ले जाना चाहता हूँ। बेटा! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ भी नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहा है। परन्तु देखो, यही विशिष्ठता याज्ञवल्क्य और मुनिवरो! देखो, वैदिक आचार्य भारद्वाज मुनि के यहाँ भी इस प्रकार के विज्ञान की उपलब्धियाँ होती रहीं। तो मेरे प्यारे! एक समय मुझे स्मरण है कि नाना ऋषियों का एक समाज एकत्रित हुआ जो बेटा! महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ हुआ। भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ उनका विद्यालय बड़ा भव्य था। और विद्यालयों में अनुसन्धान की प्रवृत्तियाँ बनी हुई थीं। ब्रह्मचारी जन नाना प्रकार का अनुसन्धान करते मानो अग्नि विद्या पर, प्राण सत्ता पर, नाना प्रकार के चित्रों के ऊपर चित्रण करते रहते। मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण आता रहता है। भारद्वाज मुनि महाराज एक समय प्रातःकालीन बेटा! वेदों का अध्ययन कर रहे थे। नाना ब्रह्मचारी उनके समीप विद्यमान है। ब्रह्मचारियों ने प्रश्न किया कि महाराज! ये वेद मन्त्र कुछ कहता है, इसके ऊपर कुछ प्रकाश होना चाहिए। तो मुनिवरो! उन्होंने वेद का मन्त्र जब उद्गीत रूप में गाया कि ''चित्रो रथं ब्रह्मे व्रतां दनस्तुः विंद्वानं जनं ब्रह्मे कृतां लोकाः'' बेटा! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने कहा हे प्रभु! इसके ऊपर विचार-विनिमय होना चाहिए। वेद मन्त्र कहता है ''शिशवन्ब्रहे'' वेद मन्त्र कहता है कि प्रभु! एक-एक बिन्दु में मानो देखो, चित्र विद्यमान रहते हैं। एक-एक बिन्दु में मानव का चित्र, आकार बना हुआ रहता है। ये वेद मन्त्र कहता

है प्रभु! यह कहाँ तक यथार्थ है? भारद्वाज मुनि ने कहा कि इसके ऊपर विचार-विनिमय किया जाये।

महर्षि भारद्वाज की विज्ञानशाला

सबसे प्रथम बेटा! उन्होंने एक मानो 24 कोणों की यज्ञशाला का निर्माण किया और उस यज्ञशाला में एक यजमान बना, एक अध्वर्यु, उद्गाता बनकर के और ब्रह्मा बनकर के बेटा! होताओं के साथ याग में परिणत हो गये। जब याग में परिणत हो गये तो बेटा! उन्होंने नाना प्रकार की धाराओं में रत होते हुए उन्होंने यह विशिष्ठता में ''वर्णाः सम्भवः ब्रह्रे'' मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने एक-एक ''रक्तं ब्रह्माः रूंजाराम्'' सबसे प्रथम तो जो यज्ञशाला में यजमान स्वाहा कह करके और वेद मन्त्रों का उद्गाता उद्गीत गाता हुआ और मन की आभा में परिणत करने वाला ब्रह्मा जब वेद मन्त्र दृष्टिपात् उच्चारणाति जब वे उच्चारण करने लगते हैं तो बेटा! देखो, शब्द विद्यमान हो करके उन्होंने रथ की कल्पना की और वेद मन्त्र में यह अध्ययन किया ''चित्रो रथं वायुः सम्भवं दिव्यं ब्रह्माः अदिति'' मानो देखो, वो चित्र बनकर के और अदिति द्यौ को प्राप्त हो जाते हैं। ऐसा वेद में उन्होंने अध्ययन किया। तो मेरे प्यारे! देखो, अनुसन्धान करने लगे। उन्होंने बेटा! यज्ञशाला में मानो एक यन्त्र बहुत पुरातन काल में महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के आश्रम से उन्होंने प्राप्त किया था और वह क्योंकि वहाँ के विद्यार्थी थे, मानो छात्र थे, महर्षि भारद्वाज ''अमृतं ब्रह्माः'' द्वारा ''मानं ब्रह्रे'' यन्त्र को स्थित किया और यज्ञ जब करने लगे। यज्ञ में होता, उद्गाता जब विद्यमान होकर के आहुति प्रदान करने लगे तो मुनिवरो! देखो, अग्नि की धाराओं पर वह शब्द जो स्वाहा उच्चारण किया जा रहा था, वेद मन्त्रों के साथ वो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होकर के मेरे पुत्रो! देखो, वह यन्त्र में जाता हुआ चित्र दृष्टिपात आने लगा और वो द्यौ को प्राप्त हो रहा था। वह द्यौ मण्डल में प्रवेश कर रहा था बेटा! देखो, भूः भुवः स्वः। मानो देखो, स्वः अमृतं कहलाता है, भूर्भुवः ये लौकिक कहलाता है। तो विचार आता रहता है मुनिवरो! देखो, उन्होंने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया, जिन यन्त्रों से यज्ञशाला का आकार अग्नि की धाराओं पर और शब्दों को लेकर के अग्नि मेरे पुत्रो! द्यौ लोक को प्राप्त करा रही है। ''द्यौवं ब्रह्माः द्यौवं लोकां द्यौवं भद्रं ब्रह्मणा लोकाम्'' मेरे प्यारे! द्यौ में अदिति रूप में प्रवेश कर गया। तो विचार आता रहता है मेरे प्यारे! वो नष्ट नहीं हुआ है। वह मानो देखो, अदिति से ऊर्ध्वा में गमन कर गया और जब भी कोई वैज्ञानिक उन शब्दों को और क्रियाकलापों को साकार रूप में जानना चाहता है, वह विज्ञान रूप में पुनः से उसको जान सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है ऐसे यन्त्रों को उन्होंने ब्रह्मचारियों ने निहित करके और मुनिवरो! देखो, द्वितीय उन्होंने यन्त्र का निर्माण किया था। मुनिवरो! देखो, यन्त्र में एक रक्त का बिन्दु जैसे ही प्रवेश किया जाता जिस मानव के रक्त का वह बिन्दु है उस मानव का बेटा! आकार बनता रहता था। मुनिवरो! देखो, जब भारद्वाज मुनि के यहाँ इस यन्त्र का निर्माण हुआ तो एक समय सोमकेतु दद्दड मुनि महाराज ने यह विचारा कि मैं पूर्वजों का दर्शन करना चाहता हूँ। वे भारद्वाज मुनि के आश्रम पहुँचे। भारद्वाज मुनि से कहा कि हे प्रभु! हमने श्रवण किया है कि तुमने यन्त्रों को जाना है। और यन्त्रो में अपने पूर्वजों का दर्शन करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम परन्तु वह तो रक्त के बिन्दु के साथ दर्शन होता है। उनके रक्त का बिन्दु कहीं प्राप्त हो जाये तो हम तुम्हें दर्शन करा सकते हैं। महात्मा सोमकेतु दद्दड मुनि ने वहाँ से गमन किया। वह अपने गृह में पहुँचे जहाँ उनके वस्त्रालय उनके यहाँ नाना सङ्ग्रहालय विद्यमान थे। उनके छठे महापिता का कहीं सङ्ग्रहालयों में एक रक्त का बिन्दु उनके वस्त्र पर निश्चित हुआ, दृष्टिपात् आया, तो वे उस वस्त्र को लेकर के वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए बेटा! भारद्वाज मुनि के आश्रम में उन्होंने प्रवेश किया और भारद्वाज मुनि ने कहा, कहो ऋषिवर सोमकेतु! तुमने ''रक्तं धोषं ब्रह्रे'' कहीं तुम्हें रक्त का बिन्दु प्राप्त हुआ। उन्होंने कहा प्रभु! मेरे जो छठे महापिता है

उनके सङ्ग्राहलय में एक वस्त्र मुझे प्राप्त हुआ जिसमें एक रक्त का बिन्दु लगा हुआ है।

महर्षि सोमकेतु द्वारा छठे महापिता के दर्शन

उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, मेरे प्यारे! देखो, रक्त के बिन्दु को जब उन्होंने मुनिवरो! देखो, यन्त्र में स्थित किया तो उनके छठे महापिता का साक्षात्कार बेटा! दर्शन हो गया। मेरे प्यारे! कैसा विचित्र ये प्रभु का विज्ञान है? एक एक तरंगों में तरिंगत हो रहा है। विचार आता रहता है मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि हे सोमकेतु! ये तुम्हारे छठे महापिता जिसको 180 वर्ष निधन को हो गये है और वह देखो, एक रक्त के बिन्दु से तुम्हें दर्शन हो रहा है। उनका दर्शन ही नहीं, उनके क्रियाकलाप, उनके क्रियाओं में रत होने वाला उनका जीवन प्राप्त हो रहा है।

आओ मेरे पुत्रो! देखो, विचार आता रहता है, मैं इन गम्भीर वाक्यों में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ; विचार केवल यह कि देखो, विज्ञान अपनी सीमा पर बड़ा विचित्र रहा है, परन्तु ऋषि मुनियों ने इस सम्बन्ध में बड़ा अनुसन्धान किया। याग के ऊपर अन्वेषण किया कि चित्रों में देखो, अदिति में जाता हुआ रथ दृष्टिपात आ रहा है। बेटा! उन्होंने अनुसन्धान किया मानो एक-एक रक्त के बिन्दु में जितने रक्त के बिन्दु हैं, उनके चित्र बेटा! अन्तरिक्ष में दृष्टिपात आ रहे हैं। और उनके क्रियाकलाप, जो भी क्रिया करते थे उसका चित्र मानो दृष्टिपात आ रहा है। उनके क्रियाकलाप चित्रों के साथ में दृष्टिपात कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, एक-एक रक्त के बिन्दु में मानो तरंगें विद्यमान होती हैं। और एक रक्त के बिन्दु में इतना परमाणु है जितने परमाणुओं से मानव के शरीर का निर्माण होता है।

मेरे प्यारे! देखो, वही परमाणुवाद जब मुनिवरो! देखो, अवृत्तियों में प्राप्त होता है तो वह इतना परमाणुवाद है जिससे बेटा! देखो, मानव ब्रह्माण्ड की कल्पना कर सकता है। एक एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन होता है मानो देखो, सृष्टि चक्र बड़ा विचित्र माना गया है। परन्तु एक-एक परमाणु में विभक्त होते बेटा! ब्रह्माण्ड, नाना प्रकार की पृथ्वियाँ बेटा! नाना सूर्य दृष्टिपात आने लगते हैं। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता है। आज मैं तेरे विज्ञान की प्रशंसा नहीं कर पाता। यह मानव तो बिखरे हुए परमाणुओं को एकत्रित करके, कहीं यन्त्रों का निर्माण कर लेता है। कहीं चित्रावलियों का निर्माण कर लेता है, कहीं अग्नि अस्त्रों का निर्माण कर लेता है। मानो देखो, कहीं रेचक और कुम्भक करके बेटा! वो अन्तरिक्ष में उड़ानें उड़ने लगता है। तो आओ मेरे पुत्रो! मैं आज तुम्हें विज्ञान के क्षेत्र में नहीं ले जा रहा हूँ विचार केवल यह कि हमें बेटा! बहुत गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होकर के विचार-विनिमय में करना है।

माताओं को प्राण विद्या का विस्तृत ज्ञान

बेटा! ऋषि मुनियों के क्षेत्र में जब हम प्रवेश होते हैं तो मुनिवरो! देखो, ये सब भारद्वाज मुनि के आश्रम में ऋषि मुनियों का मानो समय-समय पर आगमन होता रहता और वह विद्यालयों में जो उन्होंने विज्ञान को जाना है, उसको जानते रहते हैं। तो मेरे पुत्रो! उसकी आभा में रत होता रहा है। हमारे यहाँ प्राण विद्या में बड़ा विशिष्ट रूप माना गया है। मैंने बहुत पुरातन काल में कहा है कि बेटा! एक प्राण विद्या है जो मुनिवरो! देखो, माताओं के द्वार पर सदैव नृत्य करती रही है। मुझे बहुत-सा काल स्मरण है माताओं का जीवन भी बड़ा विशिष्ठता में गमन करता रहा है। जो बेटा! तपस्विनी माता होती है, तपस्या में परिणत होती है वो अपने प्राण और अपान को मिलान कराना जानती है, और माता अपने गर्भ के शिशु से, आत्मा से वार्ता भी प्रकट करती रही है। ऐसी मानो माता मल्दालसा हुई है, वृत्तिका हुई है, और चाक्राणी और देखो, वह 'अमृतां ब्रह्मे' कात्यायनी रही है और मैत्रैयी भी इस प्रकार की रही है, बहुत-सी माताओं का जो शृंगार है, आभूषण है वह

अपनी गर्भ की आत्मा से वार्ता प्रकट करना है, मानो देखो, प्राण सत्ता के द्वारा, वह आत्मा से कहती है, कतमोऽसि हे आत्मा! तू कैसे मेरे गर्भ में आयी है? उससे वार्ता हो रही है। वेद का मन्त्र कहता है ''भुनं ब्रह्माः सम्भवे देवाः चित्रो शिशुः वारुणाश्रुति विद्या'' मेरे प्यारे! वो माता दिव्य होती है, जो माता देखो, अपने गर्भ की आत्मा से वार्ता प्रकट करके मानो देखो, मनन करती रहती है। गर्भ में ही उसे ब्रह्मवेत्ता, जिस विद्या को उसे देना है वह विद्या प्रायः उसे प्राप्त होती रहती है। ये विद्याएँ बेटा! महाभारत के काल तक मानो देखो, महाभारत में इस विद्या का बड़ा चलन रहा है। त्रेता के काल में भी बहुत चलन रहा है। इस विद्या के ऊपर अन्वेषण करने वाली मेरी पुत्रियों ने बेटा! बड़ा अनुसन्धान किया है। जैसे ही बिन्दु में शिशु का प्रवेश होता है, सर्वत्र देवताओं का अनुभव करना और मानो जिस प्रकार का माता पुत्र को निर्माणित करना चाहती है उसी प्रकार का उच्चारण करना, विचार बनाना उसी देवता के सम्बन्ध में मानो क्रियाओं में जीवन को लाना बेटा! देखो, प्रायः यह विद्या हमारे यहाँ विशिष्ठ मानी गयी है।

प्राण विद्या से दीप मालिका

हमारे यहाँ प्राण विद्या भी बड़ी एक मानो वृत्तियों में चलनता में रही है। मेरे प्यारे! प्राण को अपान में प्रवेश करके और अपान को समान में, समान को व्यान में प्रवेश करके बेटा! देखो, एक दीपावली गान बन जाता है। और रात्रि के काल में दीपमालिका प्रविष्ट होती रही है। तो मैंने बेटा! बहुत पुरातन काल में भी तुम्हें ये चर्चाएँ दी हैं और विचार दिये हैं। मानो देखो, ऐसे-ऐसे ऋषि जो गान के द्वारा वेद मन्त्रों के द्वारा प्राण को अपान में प्रवेश करके, अपान को समान में, समान को मुनिवरो! देखो, व्यान में और व्यान को उदान में प्रवेश करा करके बेटा! देखो, एक विद्युत अग्नि की धाराएँ बेटा! एक दीपमालिका बनती रही है।

यज्ञाग्नि द्वारा आहार

तो आज में बेटा! इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ केवल विचार-विनिमय यह कि हम परमपिता परमात्मा का जो अनूठा विज्ञान है, ज्ञान है। उसे जानने के लिये जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में विराजमान होकर के वह देखो, अग्नि को देवताओं का मुख बनाकर के, और उसके मुख में साकल्य प्रदान कर रहा है और वह साकल्य मानो देवताओं को प्राप्त हो रहा है। वह सर्वत्र मानो जो अग्नि में काष्ठ में रहने वाली अग्नि है वो प्रदीप्त हो जाती है। विचारों की अग्नि प्रदीप्त होकर के द्यौ को जाती है। और मुनिवरो! देखो, वही अग्नि हृदय में प्रवेश करके वह हृदय गाही बनाकर के सूक्ष्म परमाणुओं को अपने में आहार रूप में परिणत हो रहा है। तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय, क्या मैं आज तुम्हें यह विचार देने आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा का जो अनूठा विज्ञान है और जो मानव ने साकार रूप में जानने का प्रयास किया है वह मानव भी धन्य है। परमात्मा की महानता में संरत रहना और उसी में रत रहना यह उनका और भी सौभाग्य माना जाता है। परमपिता परमरत्मा का स्मरण करना, उसकी सृष्टि को निहारना, सृष्टि में जो ज्ञान, विज्ञान है, उसे क्रिया में लाना, ये सब जिज्ञासु और मानवीयता का दर्शन है और इसमें आध्यात्मिक विज्ञान एक महान बनाता है। जैसे मुनिवरो! देखो, परमात्मा का ये जड़ और चेतन्य जगत् माना गया है। बेटा! देखो, जड़ उसे कहते हैं जिसमें ज्ञान और प्रयत्न नहीं होता। जिसमें ज्ञान, प्रयत्न शून्य है वो संसार मानो जड़वत् माना गया है और जहाँ ज्ञान है, और प्रयत्न है, वो संसार बेटा! परमात्मा का जगत् चेतन्य माना गया है। तो जड़ और चेतना के ऊपर हम विचार-विनिमय करते हुए, परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानते हुए, हम इस सागर से पार हो जायें। हम परमात्मा के अनूठे जगत में विद्यमान हैं, इसकी प्रतिभा को जानना हमारा कर्तव्य है

ये है बेटा! आज का हमारा वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता

परमात्मा की महती अनन्तता और उसके विज्ञान के ऊपर हम सदैव रत रहें। आभा में अभ्योदय अपने में परिणत होते चले जायें और परमात्मा का स्मरण करते हुए उसके ज्ञान और विज्ञान में रत हो जायें। यह है बेटा! आज का वाक् और मानो देखो, ये जो यज्ञशाला है इसका रथ बनकर के द्यौ-लोक में चला जाता है। कितना पवित्र हमारा ज्ञान और विज्ञान अभ्यों में रहना चाहिए। ये है बेटा! आज का वाक्, समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मानाहमत्वायं आ पाः। ओ३म् यशश्चऽहं रेधि यं ऋताः आभ्याम् रथं मानाहमत्वा यं आ पाः। ओ३म् रेवं घ्राणः वाचन्नमः वायुरताः। अच्छा भगवन आज्ञा। दिनांक 5.2.89, स्थान जल विहार, दिल्ली।

३ तप का स्वरूप ०७ ०२ १९८९

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण करते रहते है। जिस पवित्र वेद वाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि प्रत्येक वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गा रहा है अथवा उसके गुणों का वर्णन कर रहा है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं। और जितना भी ये जड़ जगत् अथवा चेतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है। उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं क्योंकि उसका जो जगत है वह अनन्तमयी माना गया है।

वे परमपिता परमात्मा दोनों ही प्रकार के जगत में निहित रहते हैं। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही जब ऋषि मुनियों ने इसके ऊपर अनुसन्धान किया तो उन्होंने इस संसार को दो प्रकार के रूपों में मापने का प्रयास किया। एक मानो चेतनामयी है और एक जड़वत् माना गया है। मानो चेतनामयी जितना जगत है, उसमें ज्ञान है, विज्ञान है और मानो उसमें ज्ञान और प्रयत्न मुख्यतः रहते हैं। जो आत्मा का मौलिक गुण कहा जाता है और दूसरा यह जो जगत है, यह जड़वत है मानो पिण्ड बना हुआ है। पिण्ड में गति भी है और गतिवान होने से उसके पश्चात भी वो जड़वत है। क्योंकि वो ज्ञान और विज्ञान, ज्ञान और अप्रयतम् क्रियाओं से निहित हो अपने में अपनेपन की आभा को अनुभव नहीं कर रहा है। इसीलिये वह जड़वत् माना गया है। और मुनिवरो जहाँ ज्ञान है और प्रयत्न है वो आत्मा का लक्षण माना गया है।

इसीलिये ये जो दोनों प्रकार का जगत है जैसे ''ज्ञानं ब्रह्मा प्रति लोकाम्'' वेद का मन्त्र यह कहता है कि चाहे ये लक्षण मानो किसी भी लोक लोकान्तरों में प्राप्त हों, वहीं आत्मा का और जड़वतता दोनों का प्रतीक माना गया है। परन्तु आश्चर्य यह रहता है कि ये परमपिता परमात्मा, जो सर्वज्ञ हैं जो इस ब्रह्माण्ड के एक-एक कण-कण में व्याप्त है वह दोनों प्रकार के जगत में बेटा! निहित रहता है। मानो वो जड़वत् में भी और चेतना में भी निहित है वह कितना अनुपम और कितना ज्ञान और विज्ञान से बेटा! अपने में निहित हो रहा है।

प्रेरणा का स्रोत

तो आज का हमारा वेद मन्त्र यह कह रहा है कि वह परमपिता परमात्मा दोनां जगत में निहित रहता है और दोनां प्रकार की आभाओं में परिणत निहित रहने वाला है। परन्तु आज का हमारा वेद मन्त्र जहाँ ये वर्णन कर रहा है कि परमपिता परमात्मा दोनों प्रकार के जगत में निहित रहता है वहाँ वेद मन्त्र हमें कुछ और भी प्रेरणा दे रहा है क्योंकि ये जो मानव है यह प्रेरणा का स्रोत है। प्रेरणा प्राप्त करता रहता है और नाना प्रकार के आविष्कारों में लगा रहता है तो इसीलिये ये प्रेरणा का स्रोत है। प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ, मानो अपने में प्रेरित होता हुआ, नाना प्रकार के लोकों में गमन करने लगता है परन्तु ये नाना प्रकार के विज्ञान में रत हो जाता है। तो इसीलिये हम प्रेरणा को प्राप्त करते हुए, उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता में सदैव रमण करते हुए क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तवान है इसीलिये हमें भी अनन्तवान बनने की अभिलाषा होनी चाहिए। ''प्रेरः अकृतं देवाः'' वह प्रेरणा हमें परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान से प्राप्त होती है। तो मुनिवरो! देखो, वह परमपिता परमात्मा अकाय है इसीलिये हमें अकाय जगत के ऊपर विचार विनिमय करना चाहिए।

तो मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना में नहीं ले जा रहा हूँ। यह तो परमपिता परमात्मा का

अनन्तमयी जगत है जिस जगत के ऊपर मानव परम्परागतों से अन्वेषण और अनुसन्धान करता रहा है। क्योंकि अनुसन्धान करना हमारा कर्तव्य है क्योंकि परम्परागतों से हमारे ऋषिवर नाना वृत्तियों में रत रहकर के बेटा! ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ते रहे हैं, और विचारते रहे हैं कि ये जो परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जगत है, अनुपमता में आने वाला जो जगत है, इसके ऊपर हम विचार-विनिमय करें। तो बेटा वो प्रायः अपने में अभ्योदय होता रहता है। और विचार-विनिमय करता रहता है।

तो आओ मेरे पुत्रो! मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना नहीं, हमारा वेद का मन्त्र हमें बेटा! "वर्णं ब्रह्मा वर्णं रूद्राः गतं ब्रह्मेः वाचो सम्भवः" मेरे प्यारे! देखो, जब हम ये विचारते हैं कि अपने में अपने पन का भान करते रहें जिससे जीवन एक अभ्योदय गतिवान होता हुआ इस सागर से पार हो जायें, क्योंकि गतिवान होना ही एक मानवीयता कहलायी जाती है।

प्रकाश का मार्ग

तो आओ मुनिवरो! हम गतिवान होते चले जायें। वह परमपिता परमात्मा गतिवान, महान और विचित्रतम कहलाया गया है तो हम उसकी महिमा और उसका गुणगान गाते हुए इस सागर से पार होना चाहते हैं। प्रत्येक मानव की एक ही अभिलाषा रहती है कि हम अपने में महान बनते रहें और मृत्यु से पार हो जायें क्योंकि आज का हमारा एक वेद मन्त्र यह कह रहा है, वेद मन्त्र कह रहा था "वर्णं ब्रह्माः लोकां वाचाः सम्भवः ब्रहे वायुः मृत्युः ललियस्तुतं ब्रह्माः कृतं लोकाम्" मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहा है। आचार्यों के समीप प्रवेश करके बेटा! वहाँ नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ता रहा है। और भी नाना प्रकार के क्रियाकलापों में यह सदैव तत्पर रहा है और नाना अनुष्ठानों में लगा रहता है। परन्तु इसमें एक रहस्यतम है। विचार है और अपने में ही विचारता रहता है उसके मनोनीत की यह इच्छा होती है कि मैं मृत्यु से पार हो जाऊँ और मैं अज्ञान में न रहूँ। मैं अन्धकार से देखो, प्रकाश के मार्ग को प्राप्त करना चाहता हूँ तो मेरे पुत्रो! देखो, वह प्रकाश के लिये सदैव लालायित रहता है।

तो हमें बेटा! देखो, उस प्रकाश के लिये लालायित रहना चाहिए। उस प्रकाश में जाना चाहिए जहाँ मृत्यु का अभाव हो जाता है, जहाँ मृत्यु नहीं रहती है, ऐसे क्षेत्र में हमें प्रवेश करना चाहिए, मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव की एक ही अभिलाषा है एक ही आकांक्षा है कि मैं मृत्यु को न प्राप्त हो जाऊँ।

तप में जीवन

बेटा! मुझे एक वाक् स्मरण आता रहता है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा है, अपनी मानवीयता में वर्णन करते हुए कहा है, जब मैं बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विचारों में, उनके आचार्यकुल में प्रवेश होकर के हम जब उनकी आभा में अभ्योदय होते रहते हैं और प्रकाश के लिये कामना करते रहते हैं तो विचारते रहते हैं कि वह अमृतं ब्रह्माः मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है जब प्रातःकालीन महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बेटा! वेदों का अध्ययन कर रहे थे। और वेद का अध्ययन करते हुए उन्होंने वेद मन्त्र में ये विचारा "अमृतां देवं अमृतं दिव्यां लोकं वाचः प्रवाहणं ब्रहे कृताः" वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे मानव! तू प्रकाश के लिये गमन कर और अन्धकार को त्यागने का प्रयास कर। मानो एक वेद मन्त्र की आख्यिका उन्हें पुनः जब स्मरण आती है तो कहते हैं कि तपं हिरण्यं ब्रह्माः "तपं लोकां वाचनन्नमं ब्रह्माः लोकाः" बेटा वेद की आख्यिका कहती है कि मानव को तपायमान होना चाहिए। तपना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, संसार में प्रत्येक, एक-एक कण-कण तपायमान है। देखो, यहाँ प्रत्येक मानव तपायमान रहता है। मेरी पुत्री मानो देखो, बाल्यकाल में तपती रहती है और तपने के पश्चात ममतामयी बन जाती है परन्तु एक ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में तप रहा

है और तपायमान रहता है परन्तु तपने के पश्चात वह आचार्यत्व को प्राप्त हो जाता है।

तो वेद का मन्त्र कहता है ''तपं हिरण्यं तपं ब्रह्मा सूर्य अदिति नामाम्'' बेटा! वेद का मन्त्र कहता है कि अदिति तप रहा है अदिति कहते हैं सूर्य को, वह सूर्य तपायमान है जो दूसरों को ऊर्ज्वा देता रहता है। संसार को तपाता है। स्वयं तपायमान रहता है तो मुनिवरो! देखो, ''तपं ब्रह्माः चन्द्रो अस्सुताम्'' यह चन्द्रमा अमृत देता रहता है परन्तु तपायमान रहता है। वायुवेग में गमन कर रहा है परन्तु वह चरे अकृताम् वह तपायमान होकर के गतिवान हो रहा है, नाना प्रकार के प्राण प्रदान करता रहता है, जो मानव के शरीरों में क्रियात्मक में क्रियाकलापों में परिणत रहते हैं।

तो मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मचारियों के मध्य में बोले, हे ब्रह्मचारियो! ये वेद का मन्त्र यह कहता है कि मानव को तपना चाहिए। हम मानव देखो, तपायमान हो जायें और तप करते हुए इस सागर से पार हो जायें। मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी जन बड़े प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आप, तपायमान क्या ''तपो अब्रणाम्'' विद्यालय को तपाना चाहिए। हमें स्वतः तपना चाहिए। मेरे प्यारे! तप कहते किसे हैं? विचार यह आता है। प्रत्येक मानव यह विचारता है कि ''तपो हिरण्यं तपः'' वेद की आख्यिका कहती है परन्तु विचार आता है चिन्तन करने के पश्चात, कि ये तप है क्या? तो वेद का मन्त्र कहता है,तप कहते हैं उग्र क्रिया का नाम तप है, जब उग्रता आ जाती है। मानव, मानव से ऊर्ध्वा में गमन करने लगता है। बेटा! तप कहते किसे हैं? पुनः ये प्रश्न उत्पन्न होता है। बेटा! तप कहते हैं, जो अपनी प्रत्येक इद्रियों को तपायमान करता है, वह तपायमान करने वाला वह अनन्तवान बन करके बेटा! तपता रहता है और इद्रियों को तपं हिरण्यं इन्द्रियों का जो साकल्य है, इन्द्रियों का जो मानो विषय है, उसको जानकर के और वही मुनिवरो! ''ज्ञानां ब्रह्मण व्रते'' वह जो हृदय में ज्ञान रूपी अग्नि प्रदीप्त हो रही है उस ज्ञानरूपी अग्नि में बेटा! उसको परिणत कर देता है और वह दोनों सर्वत्र विषयों को जानकर के इनका साकल्य बनाकर के जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होकर के बेटा! वह मानो हूत कर रहा है अग्नि के मुखारविन्दु में अपना साकल्य प्रदान कर रहा है। जो अग्नि बेटा! सर्वत्र हृदयों में, माता के गर्भस्थल से लेकर के मानो देखो, नाना लोक लोकान्तरों में सबमें गमन कर रहा है, वह 'अग्नं ब्रह्माः' वह 'अग्नं लोकाम्' मेरे पुत्रो! देखो, वह अग्नि अपने में ''अपने को ब्रह्'' को प्राप्त होता रहता है। तो आओ, मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? वेद का मन्त्र कहता है, आचार्यजन कहते हैं मानव क्या, प्रत्येक पदार्थ तप रहा है। बेटा! अणु और परमाणु मानो ये सर्वत्र तपायमान है और तप कहते किसे हैं? बेटा! यह प्रश्न बना का बना रह गया।

मानो देखो, तप कहते हैं जो इन्द्रियों को तपायमान करता है, वह इन्द्रियों को तपाता रहता है। किसमें तपाता है? ज्ञान रूपी अग्नि में। वह प्रत्येक इन्द्रिय का जब ज्ञान हो जाता है कि नेत्रों का क्या विषय है? अग्नि अमृतम् और श्रोत्रों का क्या विषय है? वाणी का क्या विषय है? मेरे पुत्रो! त्वचा का क्या विषय है? और घ्राण इन्द्रियों का, पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को जब वह तपायमान और उनकें रहस्यों को जान लेता है, और उनको एकत्रित करके बेटा! ज्ञानरूपी अग्नि में जब वह प्रवेश हो जाता है तो उसका आध्यात्मिकवाद मानो देखो, सफलता को प्राप्त हो करके और वह ज्ञानरूपी मानो देखो, अग्नम् ब्रह्मणा जो प्रदीप्त हृदय में हो रही है उसमें वो हूत कर रहा है, उसमें आहुति दे रहा है। जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होकर के मेरे कर रहा है और वह अपने साकल्य का श्रद्धामयी घृत की आहुति दे रहा है। अपनी इन्द्रियों को संयम में करता हुआ जब बेटा! देवता के एक मुखारविन्दु में वह आहूत कर रहा है, तो बेटा! उसके जीवन में एक महानता की ज्योति जागरूक हो जाती है।

पवित्रता का क्रम

आओ, मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें यह विचार दे रहा हूँ महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यह कहा है कि जब तक मानव तपायमान नहीं होता, जब तक उसका अन्नादि पवित्र नहीं होता, बेटा! अन्न पवित्र होना चाहिए। जब मानव का अन्न पवित्र हो जाता है तो मन पवित्र हो जाता है और मन के पवित्र होने पर इन्द्रियाँ पवित्र हो जाती हैं, संयमी बन जाती हैं। बेटा! देखो, वह तपायमान हो जाता है वह मनस्त्व और प्राणत्व को अपने में धारयामि बना लेता है। धारणा करता हुआ बेटा! तपों में रत हो जाता है तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, अग्नं ब्रह्मणा लोकाम् बेटा! वही तो भव्य अग्नि है जो मानव के जीवन को तपोमय बना देती है। और वह श्रद्धामयी घृत की आहुति देकर के बेटा! यजमान अपने को पवित्र बनाता रहता है।

तो आओ, मेरे प्यारे, मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ केवल संक्षिप्त परिचय देने के लिये आया हूँ और वह परिचय देना हमारा कर्तव्य है और वह परिचय क्या है कि ''तपोमय हिरण्यं तपः'' बेटा! मानव को तपायमान रहना चाहिए और तप कहते हैं इन्द्रियों को तपाना, तप कहते हैं, बेटा! जो परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानकर के इस सागर से पार होने का प्रयास करता है। तो आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, तुम्हें विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा के अनन्तमयी ''वेदां प्रमाणं ब्रहे'' वह उस अमृत को देखो, ''मृत्युंजय वरणाः'' मृत्यु को विजय करने का प्रयास करता रहता है।

ब्राह्मण स्वरूप

तो आओ, मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! ब्रह्मचारियों को यह उपदेश दिया कि इस संसार में प्रत्येक मानव तपाय मान रहता है। बेटा! एक ब्रह्मचारी ने उपस्थित होकर के यज्ञदत्त ने यह कहा हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि ये ब्रह्मव्रणताम् यह ब्राह्मण कौन है? मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि तुम ब्राह्मण को नहीं जानते? ब्राह्मण के तीन स्वरूप माने गये हैं एक ब्राह्मण ''ब्रह्मणं ब्रह्माः कृतम्'' जो ब्रह्म को जानने वाला है वह ब्राह्मण कहलाता है। ''ब्रह्मज्ञानाति ब्राह्मणा ब्रहे कृतं लोकाम्'' जो ब्रह्म को जानता हो वो ब्राह्मण है।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने दूसरा प्रश्न किया कि महाराज!यह ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा कि ब्रह्मचारी उसे कहते हैं जो ब्रह्म को चरता है। जो ब्रह्म की विद्या को तपायमान करता हुआ अपने में चरेवेति लेता है, मानो वो वह ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! जो एक-एक श्वास को एक-एक श्वास रूपी मनके को जब वो ब्रह्मसूत्र में पिरो देता है तो बेटा! वो ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता है। मेरे पुत्रो! देखो, यह शब्द है ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्म और चरी को जानने का नाम बेटा! ब्रह्मचारी कहलाता है। ब्रह्म और चरी को जानने वाला ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है। ये ब्रह्मवर्चोसि कौन है?

बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है, मुनिवरो! देखो, चाक्राणि गार्गी एक समय भयंकर वन में बेटा! गान गा रही थी। वीराङ्गना बनकर के गान गा रही थी। वेदों का गान गाने वाला मानो देखो, महान कहलाता है। बेटा! वह जब गान गा रही थी तो मुनिवरो! देखो, उनके आश्रम में मृगराज भी बेटा! देखो, सिंह राज भी एक पंक्ति में विद्यमान हो जाते थे। और वह बेटा! जब वेदों का गान गाने लगते तो ''गानात्वां ब्रह्मणाः लोकां वायुः सम्भवं ब्रह्मे वायुः सर्वताः'' बेटा! देखो, जैसे वायु को सब प्राप्त करते रहते हैं इसी प्रकार वेदज्ञ मुनि को बेटा! जो गान गाने वाला है, जटापाठ में गान गाने वाला है, उसको सर्वत्र प्राणी श्रवण करने के लिये तत्पर रहते थे।

वह ज्ञान है। ये वीराङ्गना बनकर के तपोमय बनकर के जब गान गाया जाता है तो बेटा! वह परमपिता परमात्मा की चरी और ब्रह्म दोनों का सम्मिलान करने के लिये मुनिवरो! देखो, तत्पर हो जाते हैं उसका नामोकरण हमारे यहाँ बेटा! तपोमय माना गया है। वह तपश्चर कहलाते हैं।

मन और प्राण का सन्निधान

तो आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, तुम्हें विशेषता में न ले जाता हुआ केवल यह कि हमें उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में रत होते हुए, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा ''ब्रह्म ज्ञानाति ब्राह्मणः'' और ब्रह्मचारी वह जो प्रत्येक श्वास को मुनिवरो! देखो, ब्रह्मसूत्र में पिरोने वाला है। बेटा! देखो, ब्रह्मचरिष्यामि वह कहलाता है, जो चरी को जानता है, और ब्रह्म को जानता है। चरी कहते हैं प्रकृति को और ब्रह्म कहते हैं परमपिता परमात्मा को। उन दोनों का जो सम्मिलान जानता है जैसे साधक अपने में परिणत होता हुआ आचार्यों के आदेशानुसार बेटा! जो गमन करता है, वह मानो देखो, ''ओ३म् अमृतं ब्रह्मः'' वह मन और प्राण दोनों का सन्निधान करता है। वह सन्निधान मात्र से ही गतिवान होता रहता है। तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय ये कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता मानो उसकी महानता के ऊपर अपने में गान गाते हुए इस सागर से पर होने का प्रयास करें।

तो मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही आचार्य और ब्रह्मचारी के चरणों में विद्यमान होकर के ब्रह्मविद्या को पान करते रहे हैं। ब्रह्म विद्या को अपने में धारयामि, धारण करते रहे हैं। उस ब्रह्मविद्या को पान करने वाला बेटा। इस सागर से पार हो जाता है। आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ गम्भीर रहस्यतम में मैं तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता को जानकर के बेटा! इस सागर से पार होने का प्रयास करें। मेरे प्यारे! देखो, पुरातन वेद मन्त्र यह कह रहा है कि जितना भी यह जड़ जगत और चेतन्य जगत है, मानो दोनों ही प्रकार के जगत में बेटा! ये संसार अपने में निहित रहता है। मेरे प्यारे! जड़ और चेतना दोनों का समन्वय रहता है और दोनों ही जगत में वे परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं।

तो आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, मुनिवरो! क्या कि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने भी ब्रह्मचारियों से यही निर्णय कराया कि ये दोनों प्रकार के जगत को जानने का प्रयास करो। यदि तुम अपना उत्थान, अपना महान ''प्रेरणां ब्रह्मः'' प्रेरणा का स्रोत बनना चाहते हो तो इस प्रेरणा को प्राप्त करके उस परमात्मा के क्षेत्र में, ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने का प्रयास करो।

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, आज मैं तुम्हें विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ विचार केवल यह कि हम अपने देवत्त्व को जानकर के बेटा! साधक बनें और साधक वो बनता है जो मन और प्राण को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता है। बेटा! विवेकी वो बनता है जो परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान में तत्पर हो जाता है। और उसको जानकर के और पाँच ज्ञानेन्द्रियों को जानकर के बेटा! उनके साकल्य को आहुति में हूत प्रदान करता है जैसे यजमान अपने नाना प्रकार के साकल्य और मन और विचार को एक सूत्र में लाकर के बेटा! देखो, अग्नि देवता को, अग्नि जो देवताओं का मुख है इसमें प्रदान कर देता है। वही तो ऊर्ध्वा में परिणत होता हुआ अपने में महानता का गमन करता रहता है।

मृत्युंजय स्वरूप

तो आओ मेरे पुत्रो! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ आज का विचार केवल मैंने अपने भूमिका के रूप में वर्णन किया है। आज का हमारा वेद मन्त्र कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता और

महानता को जानने का प्रयास करें। बेटा! उसी के ऊपर विचार करते रहें। हम अपने में अपनेपन का भार करते हुए इस सागर से पार हो जायें और मृत्युंजय बन जायें क्योंकि मृत्यु से पार होने का प्रयास करना ही मानव का कर्तव्य माना गया है। बेटा! जब ये मानवत्व अपने में ''वर्णं ब्रह्माः लोकाम्'' मेरे प्यारे! जब यह विचारता रहता है ''सम्भूति ब्रह्माः'' हे मृत्यु! तू मेरे निकट न आ, हे मृत्यु! तू मुझे इस सागर से पार ले चल। तो बेटा! मृत्यु के पार ले जाती है। तो वेद का मन्त्र कहता है, ''मृत्युंजयं ब्रह्माः'' मेरे प्यारे! देखो, मृत्यु अपने में मृत्यु नहीं होती, इसलिये मृत्यु को पुकार कर कहना, तू मेरे समीप में आ। मेरे प्यारे! देखो, अज्ञान का नाम मृत्यु है। अज्ञान को त्यागो और ज्ञान में प्रवेश हो जाओ। मेरे प्यारे! देखो, परमात्मा के राष्ट्र में जाना या उसमें प्रवेश करना है अज्ञान को त्यागा ही स्वतः जाता है। अज्ञान को त्याग दिया, तो हम प्रकाश में चले गये, तो ये हमारा मृत्युंजय क्या है, कि हम प्रत्येक आभा में परमपिता परमात्मा की महती का भान करते हुए इस सागर से पार हो जायें।

ये है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा के जगत में विद्यमान हैं। अनुसन्धान करना हमारा कर्तव्य है और हम मृत्युंजय बनने का प्रयास करें, ये चर्चा तो बेटा! मैं तुम्हें कल ही प्रकट करूँगा। आज का विचार तो अब ये समाप्त होने जा रहा है। जितना भी ये जड़ जगत और चेतन्य जगत है मानो देखो, इसको हम जानते हुए, इससे पार हो जायें। ये है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मा वायुः आभ्याम् देवं द्राम त्वामानं रथाः वायुः गतम्। ओ३म् प्राणश्चनः रथं आभ्याम् देवाः आपाः रथं ब्रह्म आभाः। अच्छा भगवन आज्ञा। दिनांक 7.2.89, स्थान ताजपुर, बुलन्दशहर,

४ महर्षि याज्ञवल्क्य का तप ०८ ०२ १९८९

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा पुरोहित है और पराविद्या को जानने वाले हैं। क्योंकि वे पुरोहित कहलाता है, जो पराविद्या को प्रदान करने वाला है। मानो उस परमपिता परमात्मा को अदिति नाम से वर्णन किया गया है। अदिति उसे कहते हैं जो प्रकाश को देने वाला है। हमारे यहाँ पर्यायवाची शब्दों में अदिति नाम सूर्य को भी कहा जाता है जो प्रातःकाल से सांयकाल तक मानव को ऊर्जा और प्रकाश देने वाला है।

नैमित्तिक एवं स्वाभाविक ज्ञान

परन्तु इसी प्रकार हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराएँ प्रायः मानव के समीप आती रहती हैं। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में दो प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ी जाती हैं। एक उड़ान वो कही गयी है जिस उड़ान के उड़ने से मानव में मानवीयता का भाव आता है। एक हमारे यहाँ ज्ञान में, जिसे हमारे यहाँ स्वाभाविकत्व कहा जाता है। एक नैमित्तिक है और एक स्वाभाविक माना गया है। नैमित्तिक उस ज्ञान को कहते हैं जो मानव के सम्पर्क से अथवा अपनी आभा के आधार पर अपने ज्ञान और विज्ञान की आभा में रत होता रहता है। एक स्वाभाविकत्व होता है। जिसको जितना ज्ञान है उतना ही रह जाता है, वो हमारे यहाँ नाना योनियों में प्राप्त होता है।

तप की अनिवार्यता

परन्तु आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में वेद के वाक् को लेकर के इसके ऊपर विचार-विनिमय नहीं देना चाहता। विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर विचार विनिमय करते रहते हैं क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माना गया है। उसकी अनन्तता प्रत्येक तरंगों में तरिंगत हो रही है। आज मैं बेटा! तरंगों के सम्बन्ध में भी विचार-विनिमय नहीं देना चहता हूँ। विचार केवल यह है कि हम ये उच्चारण कर रहे थे ''हिरण्यं तपं ब्रह्मणाः'' कि मानव को तपना चाहिए। बेटा! तप के ऊपर ऋषि-मुनियों ने बड़ा विचार दिया है। हमारे यहाँ कोई प्राण के द्वारा तप रहा है। कोई साधना के द्वारा तप रहा है। यह संसार सर्वत्र तपायमान हो रहा है। तो विचार आता रहता है कि हमारे यहाँ प्राण के सम्बन्ध में मानव अपने को तपायमान बनाता रहा है। प्राण से मन का मिलान करता है और वो प्राणेश्वर के द्वारा ही मनस्त्व को एक ऊर्ध्वा में साधना में परिणत कर देता है। परन्तु देखो, एक वह मानव है जो अपनी साधना में परिणत हो रहा है। पाँच ज्ञानेन्द्रियों का जो ज्ञान है अथवा उसमें जो क्रियाकलाप हो रहा है। उसका साकल्य बनाकर के वो मानो देखो, उसी साधना में परिणत हो रहा है।

तप की महत्ता

मेरे प्यारे! देखो, यह भिन्न-भिन्न प्रकार का एक नृत्य हो रहा है। जिसके ऊपर सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के मानो वर्तमान के काल तक मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है। तो आओ मेरे पुत्रो! मैं इस सम्बन्ध में विचार केवल यह कि हम अपने में प्राणवृत्तियों में परिणत हो रहे हैं। आओ बेटा! आज मैं तुम्हें याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के उस विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ जहाँ तप की बड़ी विशिष्ठता आई है। मेरे प्यारे! एक समय प्रातःकालीन महर्षि याज्ञवल्क मुनि महाराज अपने ब्रह्मचारियों के मध्य में बेटा! वह विचार कर रहे थे, और

नौदामय मन्त्रों का उद्गीत गाते हुए बेटा! उनका उपदेश जब प्रारम्भ हुआ तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि वेद का मन्त्र कहता है, मानव को तपोमय मानो तपायमान होना चाहिए। तपस्या करनी चाहिए। मुनिवरो! देखो, तप के लिये बड़ा अन्वेषण और विचार करते-करते एक समय प्रातःकालीन वह बोले हे ब्रह्मचारियो! वेद का मन्त्र कहता है, ''तपं हिरण्यं तपं ब्रह्मणे लोकाम्'' कि मानव को तपना चाहिए। मेरी इच्छा है कि हे ब्रह्मचारियां! मैं तप करने जा रहा हूँ। ब्रह्मचारी जन बोले कि प्रभु! यह तो हमारा बड़ा सौभाग्य है। हे प्रभु! जिस विद्यालय में आचार्य जन तपे हुए होते हैं, वो विद्यालय पवित्र बनता, वहाँ का छात्र भी पवित्र बना करता है; परन्तु जिस राजा के राष्ट्र में राजा पवित्र होता है और तपा हुआ होता है वो राष्ट्र ऊँचा बनता है। उस राष्ट्र की प्रजा भी ऊँचेत्तव को प्राप्त होती रहती है। यहाँ तपायमान जब माता पिता गृह आश्रम में तपायमान होते हैं तो आगे आने वाला जो समाज है गृह का बाल्य, बालिका सर्वत्र तपायमान बन जायें। हे प्रभु! यह तो हमारा सौभाग्य है। आप तप करने के लिये जाइये। हे प्रभु! यह तो हमारा बड़ा मानो एक अनुवृत्तियों का क्रियाकलाप है। आप अवश्य जाईये महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्नाचित्त होकर के ब्रह्मचारियों से बोले हे ब्रह्मचारियो, हे आचार्य जनो! तुम विद्यालय को सुरक्षित रूप में धारियामि बनाना और ब्रह्मचारियों को ब्रह्मवर्चोसि का पठन-पाठन कराते, नाना प्रकार की विद्याओं का अनुमोदन होता रहे। और उसमें ''विचारां ब्रह्मणे'' क्रियाकलाप विशुद्ध रूप से रहे। ब्रह्मचारियों ने कहा हे प्रभु! आप जिस दशा में विद्यालय को त्याग करके जायेंगे उससे ऊर्ध्वा में इसे दृष्टिपात कर लेना।

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का तप

मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ब्रह्मचारियों को, आचार्यजनों को, विद्यालय को त्याग दिया और वे भयङ्कर वनों में पहुँचे और वहाँ वेद मन्त्रां का अध्ययन करने लगे। वेद मन्त्रों में उदगीत गाने लगे। वेद मन्त्र कहता ''मनं ब्रहे प्राणासुताः वृत्तं लोकाम् वाचन्नमं ब्रह्माः'' वेद का वाक् कहता है नौदामय जब मन्त्रों का उद्गीत ऋषि गाने लगा तो विचारा कि तप तो वो मानव कर सकता है, जिसका मन पवित्र रहेगा और मन से सम्बन्धी जितना भी समाज है अथवा पति है, पत्नी और देखो, कुटुम्ब इत्यादि है इन सब को सन्तुष्ट करना होगा। यदि वे सन्तुष्ट न हुए तो मानव तपस्या कर रहा है और मानव की तरंगे देखो, उस तप को खण्डित करने में लगी रहती हैं। मेरे प्यारे! वह मानव का मन सम्बन्धित रहता। मन से मन का जो स्नेह है मानो वह तरंगों में तरिंगत होता रहता है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जब यह विचारा कि वेद मन्त्र तो मिथ्या उच्चारण कर ही नहीं सकता। यह तो परमपिता परमात्मा की नौदामयी वाणी है। उसके हृदय के, परमात्मा के हृदय के उद्गार हैं। मेरे प्यारे! विचारा कि मेरी दो पत्नियाँ हैं एक मैत्रेयी है, एक कात्यायनी। इन दोनों को सन्तुष्ट करना है। मेरे पुत्रो! देखो, भ्रमण करते हुए उन्होंने अपने गृह में प्रवेश किया और अपनी पत्नी कात्यायनी के द्वार पर पहुँचे। कात्यायनी ने बेटा! आसन दिया और आसन पर जब विराजमान हो गये तो देवी ने प्रसन्नचित्त होकर के यह कहा कि हे प्रभु! आप विद्यालय में अध्ययन कराते हैं। आप ब्रह्मचारियों को अनुमूलन शिक्षा प्रदान करते हैं। हे प्रभु! बिना सूचना के मेरे इस गृह में आने का कारण क्या है? मेरे पुत्रो! याज्ञवल्क्य मुनि बोले कि हे देवी! मैं आज प्रातःकालीन ब्रह्मचारियों के मध्य में याग करने के पश्चात वेदों का अध्ययन करने लगे, नौदामय मन्त्रों का अध्ययन करने लगे तो उसमें उच्चारण किया जा रहा था ''तपं ब्रह्माः तपं रुद्राणि गच्छतं तपो हिरण्यं व्रताः'' हे देवी! तप की बड़ी महिमा आ रही थी और मेरी उत्कृष्ट इच्छा बनी कि मैं तप करने के लिये चला जाऊँ। मेरे पुत्रो! देखो, अमृतं उन्होंने कहा ''दिव्यां ब्रह्मणे'' तुम्हारी क्या इच्छा है। कात्यायनी बोली प्रभु! ये तो हमारा बड़ा सौभाग्य है कि आप तप करने के लिये जा रहे हैं क्योंकि जिस घर में स्वामी तपायमान होता है ऋषित्व को

प्राप्त होता है वह गृह तो बड़ा पवित्र होता है। आप तप करने के लिये जाइये, यह तो हमारा सौभाग्य है, हम तो अपने को सौभाग्यशाली स्वीकार करते हैं।

महर्षि याज्ञवल्क्य एवं मैत्रेयी सम्वाद

मेरे पुत्रो! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बड़े प्रसन्न हुए, और प्रसन्न होने के पश्चात उन्होंने अपनी देवी को सन्तुष्ट किया और वह द्वितीय पत्नी के द्वारा पहुँचे। जब वह ''कृतं ब्रह्माः'' वह मैत्रेयी के समीप पहुँचे और मैत्रेयी ने उसी प्रकार का स्वागत किया। आसन दिया और ये आसन पर विराजमान हो गये और विराजमान होने के पश्चात् देवी ने कहा प्रभु! आज बिना सूचना के गृह में आने का कारण? उन्होंने कहा हे दिव्यासे! आज मैं प्रातः कालीन अध्ययन करा रहा था परन्तु नौदामय मन्त्र आ रहे थे कि मानव को तपना चाहिए। तो हे देवी मैं तप करने के लिये जा रहा हूँ। मानो देखो, मैं तुम्हारी इच्छा और तुम्हें सन्तुष्ट करने के लिये तुम्हारे द्वार पर आया हूँ।

आत्म कल्याण

मेरे प्यारे! देखो, मैत्रेयी ने कहा प्रभु! ये तो मैंने स्वीकार कर लिया। परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ कि आप तप करने के लिये जा रहे हैं मैं आपकी पत्नी हूँ, तो मेरा क्या बनेगा? मुनिवरो! देखो, उन्होंने कहा कि हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि तुम्हारा मेरा दोनों का आध्यात्मिकवाद पर शास्त्रार्थ हुआ था। और वह शास्त्रार्थ बड़ा अनूठा और मानो देखो, उस शास्त्रार्थ में ''अमृतं ब्रह्माः'' तुमने आत्मा के ऊपर विचार-विनिमय किया और तपोमय ब्रह्मविद्या के ऊपर तुम्हारा विचार रहा परन्तु तब तुमने यह कहा था कि मैं सहायक और साधना करने के लिये आपके द्वार मेरा गमन है। तो हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए, तुम्हारा वो ज्ञान कहाँ चला गया? मैत्रेयी ने कहा प्रभु! यह तो वाक् यथार्थ है परन्तु मेरी अन्तरात्मा की सन्तुष्टि नहीं हो पा रही है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने यह कहा कि हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि पति जो होता है वो पत्नी तक सीमित होता है। परन्तु यदि वह पति स्वयं अपने लिये पति बन जाये, इन्द्रियों का स्वामी बन जाये तो मानो देखो, उसका कल्याण हो जाये। और वह प्रभु को प्राप्त हो जाये। हे देवी! पत्नी जो होती है वह पति तक सीमित रहती है। परन्तु यदि वह अपने लिये स्वतः पत्नी बन जाये अपनी इन्द्रियों पर स्वामित्व बन जाये तो मुनिवरो! देखो, वह परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाये। हे देवी! तुम्हें प्रतीत है कि मानो देखो, पुत्री जो होती है, पिता तक सीमित रहती है और पिता उसे मानो देखो, पुत्री कहता है। यदि वह स्वयं पुत्री अपने लिये पुत्री बन जाये और यह स्वीकार करे कि मैं तो मानो परमपिता परमात्मा की हूँ और परमपिता परमात्मा ने मुझे अग्नि दी है, आपो दिया है, गर्भस्थल में उसी ने पालना की है और अब भी पालना वही कर रहा है। पृथ्वी माता के गर्भस्थल में जो खनिज और खाद्य उत्पन्न हो रहा है, उसका मानो देखो, स्वामित्व प्रभु कर रहा है। अपने में जब पुत्री यह स्वीकार कर लेती है मैं तो जो परमात्मा इतना साथी है, इतनी दिव्यता देता है। मैं तो उसकी पुत्री हूँ तो वह स्वयं देखो, आत्म कल्याण हो जाये। वह परमपिता परमात्मा के पथ को ग्रहण करके, यह संसार का पथ उससे दूरी चला जाता है। मेरे पुत्रो! उन्होंने कहा हे देवी! पुत्र जो होता है, वह मानो देखो, माता तक सीमित रहता है। यदि वह माता अपने प्रभु को स्वीकार कर ले और वह यह स्वीकार करे, मैं माता की उस गोद में, उस आनन्दमयी रहस्य में विद्यमान हूँ, जो माता जगत माता है। संसार को निर्माणित करने वाली है, वह वसुन्धरा है, तो मानो देखो, उसका कल्याण हो जाये।

आत्मतृप्ति हेतु कर्म

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब ये कहा कि देवी! मानव जो भी अपना क्रियाकलाप कर रहा है, कर्म

कर रहा है वह आत्म तृप्ति के लिए कर रहा है। मानो देखो, एक मानव द्रव्य को आभा में लाना चाहता है अपने आत्म कल्याण के लिये। बेटा! देखो, एक मानव ज्ञान में रत रहना चाहता है आत्मा, परमात्मा और समाज और मानो दर्शन में अपने को ले जाना चाहता है, वह आत्म कल्याण के लिये, आत्मा की तृप्ति के लिये। उससे उस आत्मा को भोजन प्राप्त होता है; जैसे एक माता भोजनालय में भोजन का निर्माण करती है, भोजनालय को तपाती है। उसको मानव पान कर रहा है। शरीर की पुष्टि होती है, शरीर का वो भोजन है। इसी प्रकार जितना भी ज्ञान है, विज्ञान है, यौगिकवाद है, वह सर्वत्र आत्म तृप्ति के लिये कहलाता है, इससे आत्मा को भोजन प्राप्त होता है। ''आत्मा भोजनं ब्रह्मणः वाचप्रह्रे लोकाम्'' क्योंकि यह संसार दो प्रकार की आभा में निहित रहता है एक रूढ़ि में रहता है और एक यौगिकता में रहता है तो यौगिकता में हे देवी! जो जाता, वो अपनी आत्मा के लिये, एक मानव याग कर रहा है, अनुष्ठान कर रहा है; वह अपनी आत्मा को तृप्त करने के लिये कर रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, आत्मा का कल्याण, आत्मतत्त्व के रूप में रत रहना चाहिए। तो इस प्रकार जो भी मानव परमपिता परमात्मा का मनन करता है, चिन्तन कर रहा है। वो आत्म कल्याण के लिये। हे देवी! संसार में यह भी निश्चय है कि जो भी मानव कर्म करता है, वह अपने लिये ही कर रहा है, अपने को तृप्त करना चाहता है। इसीलिये हे देवी! संसार में मानव को क्रिया और तपस्या में परिणत होकर के अपने को तृप्त करना चाहिए।

ज्ञान और प्रयत्न

मेरे प्यारे! देखो, उस समय मैत्रेयी ने कहा प्रभु! आपने तो मेरे ज्ञान के चक्षुओं को स्पष्टीकरण करा दिया है। आप तो बड़े विचित्र हैं, मानो देखो, मुझे इतना प्रतीत नहीं था। उन्होंने कहा हे दिव्या! तुम्हें ये तो प्रतीत है कि आत्मा चेतना में रत रहने वाली है। ज्ञान और प्रयत्न को स्वाभाविक गुण कहा जाता है। उस आत्मतत्व में ज्ञान और प्रयत्न दोनों एक सूत्र में सूत्रित हो जाते हैं तो वह परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, उस समय मैत्रेयी ने कहा धन्य है प्रभु! आपने मुझे प्रकाश में पहुँचाया है, हे प्रभु! आप तपस्या करने जाइये। याज्ञवल्क्य बोले कि हे देवी! ''दिव्याति अमृतम्'' तुम्हारा यह जो द्रव्य है इसका मैं बँटवारा कर देता हूँ। मैत्रेयी ने कहा प्रभु! आप तप करने जाइये, हम दोनों आपस में इसका बँटवारा स्वतः कर पायेंगी।

ऋषि याज्ञवल्क्य की तपस्या और सतपथ ब्राह्मण

मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज बड़े प्रसन्न हुए दोनों पत्नियों को संतुष्ट करके मेरे पुत्रो! देखो, वो भयङ्कर वन में जा पहुँचे और विचार-विनिमय करने लगे कि यह तो मैंने नौदामय मन्त्रों में अध्ययन कर लिया कि ''तमं ब्रह्मणः तपो लेक्प्रवाहणं वृहि लोकाम्'' मानो देखो, तप करना चाहिए, तप है क्या? मेरे पुत्रो! देखो, इस विचार में लग गये हुए जब समय हो गया तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने विचारा ''ब्रह्मणे लोकाम्'' अब मैं क्या करूँ? उन्होंने कहा कि सम्भूति ब्रह्मवाचाः ''व्रहे देवत्यां लोकाम्'' मुझे तो देवत्व को प्राप्त होना है और वो कैसे हुआ जाये? मन को पवित्र बनाने का नाम ही तप कहा जाता है। अब मन को कैसे पवित्र बनाया जाये? तो बेटा! ऋषि ने वर्णन करते हुए अपने मन्त्रों का अध्ययन करते हुए यह विचारा की अन्न से मन पवित्र होता है इसलिये अन्न पवित्र होना चाहिए। अब बेटा! देखो, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज भयङ्कर वनों में विद्यमान थे। उन्होंने अन्न को एकत्रित करना प्रारम्भ किया। जिस अन्न पर किसी का कोई अधिकार नहीं था, शिलस्थ अन्न को उन्होंने एकत्रित किया और उनको पान किया। उस तरङ्गों से मन का निर्माण हुआ। अब बेटा! देखो, मन पवित्र बन गया। जब ऋषि ने बारह वर्ष तक इस प्रकार कठोर तपस्या की और बारह वर्ष के पश्चात मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने एक पोथी का निर्माण किया। जिस पोथी का नाम सतपथ ब्राह्मण कहा जाता है। सतपथ, जो सत के पथ पर मानव को ले जाये। वह बेटा! उस पोथी का निर्माण किया।

देवासुर-सङ्ग्राम

उस पोथी में बेटा! प्रथम उन्होंने तीन वाक्यों की व्याख्या की। उन्होंने कहा ''सम्भवः व्रहे देवत्वां ब्रह्माः'' बेटा! उनके यहाँ एक देवासुर-सङ्ग्राम की चर्चा आयी। जो बेटा! वेद मन्त्रों में भी देवासुर-सङ्ग्राम की चर्चा आती है। जो यौगिक और रूढ़िवाद दोनों के संघर्ष का नाम भी मुनिवरो! वह देवासुर-सङ्ग्राम कहा जाता है। तो देवासुर-सङ्ग्राम की चर्चा होती रही। तो मुनिवरो! ऋषि ने सबसे प्रथम तो यही कहा कि ''ब्रह्मचरे व्रताः'' कि ब्रह्म को चरना ही हमारा कर्तव्य है। और ब्रह्म् को चरने वाला मेरे पुत्रो! देखो, ऊर्ध्वा को प्राप्त हो जाता है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने सबसे प्रथम एक आख्यिका उन्होंने वर्णन की और उस आख्यिका में यह कहा ''देवां ब्रह्मे देवां असुरो सङ्ग्राम् ब्रह्माः'' देवासुर-सङ्ग्राम की चर्चा आने लगी। तो बेटा! देखो, देवासुर-सङ्ग्राम किसे कहते हैं? ऐसा कहते हैं कि देवासुर-सङ्ग्राम होता रहा। परन्तु देखो, एक समय देवताओं ने दैत्यों को बेटा! देखो, विजय कर लिया। जब दैत्यों को विजय कर लिया तो मुनिवरो! देखो, ''व्रणां ब्रह्माः'' जब ये विजय हो गये तो कहते है कि एक वृषव का जन्म हुआ। जब मुनिवरो! देवताओं की सभा में एक वृषव का जन्म हुआ। जिसे वृख भी कहा जाता है तो मेरे प्यारे वह जो वृख है क्योंकि वृख के हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं। वृख नाम परमपिता परमात्मा का है और वृषव नाम गौ के बछड़े को भी कहा जाता है। और यहाँ वृषव नाम वृख मन को कहा गया है। जब यह मन देवताओं की सभाओं में पवित्र बन गया तो बेटा! देखो, इसके मुखारबिन्दु से ध्वनि का जन्म होने लगा। जब वह ध्वनि का जन्म होने लगा तो बेटा! देखो, जो ध्वनि को श्रवण करता वह देवता बनने लगा। जब यह संसार देवताओं का बनने लगा, उस ध्वनि के प्रभाव से, तो वह ध्वनि ध्वनित होती रही। मेरे पुत्रो! देखो, वह अब दैत्यों ने देवताओं के समूह को दृष्टिपात करके उनके हृदय में एक जिज्ञासा जागरूक हो गयी। और वह जिज्ञासा बड़ी अनुपम थी। मेरे पुत्रो! देखो, ''जिज्ञासानां भविते ब्रह्माः'' मुनिवरो! देखो, दैत्यों का एक समाज एकत्रित हुआ। तो उन्होंने अपने देवराज शुम्भं ब्रहे शुम्भ, निशुम्भ रक्तबीज इत्यादियों को एकत्रित करके बेटा! देखो, दैत्यराज, असुरों में देखो, दैत्यराज का बड़ा महत्व माना गया है। मुनिवरो! देखो, दैत्यराज से अपनी गाथा वर्णन की शुम्भ निशुम्भ, रक्तबीज इत्यादि कैटव इत्यादि जो दैत्य थे उन्होंने मुनिवरो! देखो, उनकी सभा में जब दैत्यराज महाराजा विरोचन का देखो, आगमन हुआ तो वह विराजमान हो गये और महाराज विरोचन से जब गाथा उन्होंने वर्णन की कि महाराज! देवताओं ने हमें विजय कर लिया है और उनकी सभा में एक वृषव का जन्म हुआ और उसके मुखारविन्दु से एक जब ध्वनि का जन्म होता, जो ध्वनि को श्रवण करता है, तो वही देवता बन जाता है, अब प्रभु! ये देवताओं का समाज बना, अब दैत्यों का क्या बनेगा? उन्होंने कहा भई, देखो, उस वृख को छलो और छलने के पश्चात् यहाँ लाओ। निरीक्षण होगा।

यज्ञ-महिमा

तो बेटा! देखो, शुम्भ, निशुम्भ रक्तबीज ने यह विचारा कि आज मध्यरात्रि में उसको छलना है। बेटा! जब उन्होंने मध्यरात्रि में वृख को छला तो बेटा! उसके ''अमृतां ब्रह्मे'' उसको महाराज विरोचन के द्वारा लाया गया। और विरोचन से कहा हे भगवन! यह लीजिए लेकिन जब वृख का निरीक्षण किया तो वृख ने बेटा! उस ध्वनि को पूर्व ही रेणुका को समर्पित कर दिया था कि आज तू दैत्यों के द्वारा छला जायेगा। उन्होंने वह ध्वनि बेटा! देखो, रेणुका में प्रवेश हो गयी। महाराजा विरोचन बोले कि रेणुका में वो ध्वनि चली गयी है। अब बेटा! देखो, दैत्यराजों ने अगले दिवस विचार बनाया कि मध्यरात्रि में इसे छलना है। मेरे पुत्रो! देखो, जब उसे छलने का क्रम बनाया तो क्रम बनाते-बनाते ब्रह्मणां लोकां वायु सम्भवाः मुनिवरो! देखो, रेणुका को लाया गया। रेणुका

ने देवताओं की धरोहर को, ध्वनि को, यज्ञ के दश पात्रों मे समाहित कर दिया। अब मेरे प्यारे! देखो, वह तो यज्ञ के दश पात्रों में समाहित हो गई। अब मुनिवरो! देखो, रेणुका को जब छला गया तो रेणुका में वह ध्वनि नहीं थी, वह ध्वनि से रहित हो गयी थी। उन्होंने बेटा! देखो, विचारा कि महाराज वह ध्वनि कहाँ गयी। महाराज विरोचन बोले कि वह ध्वनि तुम्हें अब नहीं प्राप्त होगी, क्योंकि यह तो जितना बन गया देवताओं का बनेगा, वह ध्वनि तो यज्ञ के दश पत्रों में प्रवेश हो गयी है। और यज्ञ के पात्रों में से तुम उसे निकास नहीं सकोगे, इसलिये तुम उस ध्वनि से विरक्त हो जाओ।

साधक

मेरे प्यारे! देखो, वह दैत्यराज अपने में मौन हो गये और विचार आता है बेटा! यह क्या आख्यिका वर्णन की है ऋषि ने बेटा! देखो, ऋषि ने कहा देवासुर-सङ्ग्राम जब मानव साधना में प्रवेश होता है। साधक बनने के लिये परमात्मा के द्वार पर जाता है। तो उससे पूर्व वह इस संसार में जो देवासुर सग्राम है कहीं असुर प्रवृत्ति है, कहीं देव प्रवृत्ति है इन प्रवृत्तियों में संघर्ष होता रहता है। तो जब देव प्रवृत्ति प्रबल हो जाती है, तो मानो देखो, यह दैत्य विजयी हो जाते हैं। दैत्य कौन है बेटा! काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि ये दैत्य हैं, इन्हें विजय किए बिना बेटा! कोई मानव परमात्मा के द्वार पर नहीं जाता।

मेरे पुत्रो! देखो, वेद का ऋषि भी, वेद मन्त्र भी यह कहता है। कि जब तक मुनिवरो! देखो, काम, क्रोध कैटव इत्यादि जो बने हुए हैं। उनका जो नामोकरण है। तृष्णा कहते हैं रक्तबीज को, बेटा! विजय करना और विजय करने के पश्चात देव प्रवृत्ति होना। देवता की जब प्रवृत्ति बन जाती है तो बेटा! मन पवित्र बन जाता है। जब यह मन जिसे वैदिक साहित्य में बेटा! देखो, वृख कहते है बेटा! देखो, जब इसके मुखारबिन्दु से ध्वनि का जन्म होता, तो जो उस ध्वनि को पान करता वो देवता बन रहा। अब बेटा! देखो, देवत्यां देखो, ये रक्तबीज इत्यादियों ने अपनी सभा करने के पश्चात् देखो, यह मन तो अच्छाई और त्रुटियों में दोनों में ही मानो देखो, ठगित हो जाता है। ये दोनां से वृत्ति बन जाता है। तो बेटा! इस मन को छल लिया जाता है। ये मन असुरता में और देवत्व में, दोनों में छला जाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब इन्होंने इसे छला तो मुनिवरो! उन्होंने धरोहर को, ध्वनि को; उस ध्वनि का नाम है धर्म, जब धर्म रूपी ध्वनि जो बेटा! देखो, रेणुका में समाहित हो गयी और वह रेणुका कौन है? रेणुका नाम बेटा! बुद्धि का है। बुद्धि के चार प्रकार हैं, बुद्धि, मेघा, ऋतम्भरा, और प्रज्ञा। मेरे प्यारे! देखो, रेणुका कहते हैं बुद्धि को। जब मुनिवरो! देखा, ''रेणुकां ब्रह्मणे'' देखो, रेणुका नाम रात्रि को भी कहते हैं रेणुका चन्द्रमा की कान्ति को भी कहते हैं। परन्तु यहाँ पर्यायवाची शब्द की तो बहुत सी विवेचना है परन्तु यहाँ केवल वर्णन यह है कि रेणुका नाम मेरे प्यारे! बुद्धि का है जब यह बुद्धि भी छली गयी तो उन्होंने उस धरोहर को, देवताओं की धर्मरूपी धरोहर को बेटा! यज्ञ के दश पात्रों में समाहित कर दिया।

यज्ञ-शक्ति

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि कहता है, ''सम भ्रूदं ब्रहा देवं ब्रहो क्रणां ब्रह्रे वृत्तात भविते लोकाम्'' मेरे प्यारे! देखो, विचारा गया कि यज्ञ के दश पात्र क्या है? मेरे पुत्रो! देखो, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ कहलाती हैं। मेरे पुत्रो! ये जो शरीर है जहाँ देवासुर-सङ्ग्राम होता है जिसको हमारे यहाँ यज्ञशाला के रूप में वर्णन किया है, जहाँ याग होता रहता है। बेटा! यज्ञ के दश पात्र हैं। मुनिवरो! देखो, इनका साकल्य बनाकर के आहुति दी जा रही है। तो मुनिवरो! देखो, यज्ञ के दश पात्र, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं। बेटा! कर्मेन्द्रियों से कर्म करता है और ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान से युक्त होकर के जो कर्म करता है। मेरे प्यारे! वह परमपिता परमात्मा की महती को जानता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ देखो, इनको संयम में जो लाता है वह देवता बनता है।

वह यज्ञशाला में विद्यमान होकर के वो यजन कर रहा है। वह परमपिता परमात्मा की सृष्टि को निहार रहा है, देवत्व को प्राप्त कर रहा है। हे ममत्व को धारण करने वाले! तू अभ्योदय होकर के परमात्मा की अनुपम महती को जानकर के तू इस सागर से पार हो जा।

साधना

आओ, मेरे पुत्रो! मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नहीं आया हूँ विचार केवल यह करने के लिये आये हैं, कि हमारे वैदिक साहित्य में एक-एक वाक् को बेटा! आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दोनों से कटिबद्ध कर दिया है। बेटा! देखो, यह संसार रूपी जो यज्ञशाला है, यह परमात्मा का अनूठा जगत है, इस को निहारना और अन्तरात्मा में उसका ध्यानावस्थित करना और मुनिवरो! देखो, उसको एक सूत्र में लाने का नाम साधना कही जाती है। वह और देवत्व को प्राप्त हो जाता है। तो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! तपं ब्रह्मणः बेटा! देखो उन्होंने सबसे प्रथम अपनी सतपथ नाम की, बाह्मण पोथी में बेटा! देखो, यह वर्णन किया, और उस पोथी में यह कहा है। कि मुनिवरो! देखो, ''व्याख्यां ब्रह्मे लोकाम्'' मानो शरीर और ब्रह्माण्ड दोनों को मापने का प्रयास किया। हमारे ऋषि मुनियों की एक बड़ी विचित्र देन रही है, कि उन्होंने मानव को मानो शरीर को और ब्रह्माण्ड को एक मापने का प्रयास किया। माप करके बेटा! उसको एक सूत्र में लाकर के परमात्मा को प्राप्त होना उनकी एक वृत्ति रहा है।

तो मुनिवरो! ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो सतपथ नाम की पोथी को लेकर के याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! तपस्या करने के पश्चात् विचारा मुझे विद्यालय में जाना चाहिए। मेरे पुत्रो! वे वहाँ से गमन करते है। और भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, विद्यालय में जब प्रवेश हुए तो ऋषि का मुखारबिन्दु मानो सूर्य की भाँति, अदिति की भाँति तपायमान हो रहा था। वह अपने में बड़े वृत्तियों में रणस्सुताः अपने में प्रसन्न हो गये। और प्रसन्न होकर के बारी-बारी मुनिवरो! देखो, ऋषि मुनियों के चरणों को स्पर्श किया। वे बड़े प्रसन्न और देखो, पोथी का अध्ययन करने लगे, ब्रह्मचारी बड़े प्रसन्न। तो मेरे प्यारे! आज के हमारे विचारों का अभिप्राय यह है कि हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने इस ब्रह्माण्ड को और पिण्ड को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया। और इस संसार को यज्ञशाला के रूप में और मानो शरीर को यज्ञशाला के रूप में हूत करने के लिये उन्होंने अग्न्याधान किया है।

मोक्ष हेतु तप की अनिवार्यता

तो आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं विचार विशेष न देता हुआ केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को प्राप्त होते हुए, उसके ज्ञान और विज्ञान में सदैव रत रहते हुए, इस संसार सागर से पार हो जायें। प्रत्येक मानव का यही उद्देश्य है कि हम इस सागर से पार हो जायें जो मान और अपमान का एक सागर बना हुआ है। ये संसार एक प्रकार की प्रतिभा वृत्तों में बना हुआ है। तो आज हम परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते हुए इस सागर से पार हो जायें, यही बेटा! देखो, हमारा कर्तव्य है। और यही मृत्यु से पार होने का हमारा एक रूप बना। उसको हम पार कर सकते हैं। तो यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह ''तपं ब्रह्मणे तपो व्रतं देवाः'' यह संसार बेटा! एक-एक परमाणु तपायमान है। राष्ट्र भी तपायमान है, मानव भी तपायमान है, माता भी तपायमान है। और तपोमयी बेटा! यह संसार कहलाता है। इसलिये तप करना चाहिए और तप कहते हैं बेटा! जो अन्नं दवे जो मन को पवित्र बनाना है। ज्ञान और विज्ञान में रत रहना है। परमात्मा की सृष्टि को निहारकर के परमात्मा को प्राप्त होना है। यह है बेटा! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-

पाठन होगा इसके पश्चात ये वार्ता समाप्त। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मानं गाताः। ओ३म् दधिगृहितां रथं वाचन्नमः, वायु दधि ब्रह्मणाः। ओ३म् यशश्चाहं आपाः रथं आभ्यां देवाः। अच्छा भगवन! आज्ञा, दिनांक 8.2.89, स्थान ताजपुर, बुलन्दशहर

५ महर्षि शिकामकेतु का विज्ञान ०९ ०२ १९८१

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। और याग उसका आयतन है, उसका गृह है और उसका सदन है और वह उसमें वास कर रहा है।

तो हमारे यहाँ आचार्यों ने बेटा! उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी, महान स्वरूप का वर्णन किया गया है और यह कहा गया है, कि वे परमपिता परमात्मा महान और पुरोहित है। जो परा विद्या को प्रदान करने वाला है। और वह यज्ञोमयी स्वरूप है। जब भी किसी मानव ने ऊर्ध्वा कल्पना की अथवा उड़ानें उड़ी हैं। तो उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप कहा है क्योंकि ये परमपिता परमात्मा का ये जो ब्रह्माण्ड है, यह एक सूत्र में पिरोया हुआ है। जिसमें प्रत्येक मानव एक दूसरे में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात आता है। इसी प्रकार जितने भी मानव के क्रियाकलाप हैं, वह ऐसे ही क्रियाकलाप है जो एक दूसरे से मानो कटिबद्ध हो रहे हैं। तो आज हमें विचारना है कि हम परमपिता परमात्मा की जो अनन्तमयी मानो महिमा है ये सर्वत्र एक में परिणत हो रही है। प्रायः जितना भी शुद्धकर्म है मानो उस सर्वत्र का नाम एक याग माना गया है। हमारे यहाँ याग की कल्पना करते हुए ऋषि मुनियों ने बेटा! बड़ी विचित्र उड़ानें उड़ी हैं, और यह कहा है कि वह परमपिता परमात्मा एक अनूठा है और ''विचारणं ब्रह्मः व्रहे'' मानव उसके ऊपर परम्परागतों से विचार-विनिमय कर रहा है।

सृष्टि एक यज्ञशाला

तो आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा वेद मन्त्र हमें परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है। और यज्ञमयी आभा का वर्णन कर रहा है। हमारे यहाँ बेटा! जब परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया तो मानो देखो, ये यज्ञशाला के रूप में वर्णन किया गया। आज जब हम इसके ऊपर विचार-विनिमय में प्रारम्भ करने लगते हैं तो मानो एक अभ्योदय होता हुआ यह ब्रह्माण्ड, ये लोक लोकान्तरों बेटा! एक दूसरे में दृष्टिपात् आने लगता है। जब मैं मालाओं का वर्णन करता रहता हूँ, नाना प्रकार की जो मालाएँ हैं, वह माला एक दूसरे में पिरोयी हुई हैं। जैसे पृथ्वियाँ हैं। नाना पृथ्वियों की एक माला बन जाती है। नाना चन्द्रमाओं की एक माला बन जाती है। नाना सूर्यो की माला बन जाती है और वह माला बेटा! एक दूसरे में पिरोयी हुई दृष्टिपात आने लगती है। इस प्रकार माता के गर्भस्थल में एक प्रिततम एक याग हो रहा है। सर्वत्र देवता मानो देखो, रक्षा और उसकी आभा में यौगिकता में परिणत हो रहे हैं। माता को भान नहीं है, उसे ज्ञान भी नहीं है। परन्तु ऐसी एक माला पिरोयी गयी है कि वह माला बेटा! पूर्णत्व, बनकर के उस मानव के रूप में परिणत हो जाती है।

तो आओ बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ विचार केवल यह कि यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन होना चाहिए। याग अपने में बड़ा पूर्ण रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, हमें याग के ऊपर अपने में अनुसन्धान करना चाहिए। हमारे ऋषि मुनियों ने बेटा! कोई ऐसा विषय नहीं त्यागा है, जिसके ऊपर दर्शन और मानवीयता स्थिर न हो जाये। मुझे वो काल स्मरण आता रहता है बेटा! वैशम्पायन ऋषि महाराज अपने आसन पर विद्यमान है। और वह नौदामय मन्त्रों का जब अध्ययन करते हैं। तो बेटा! देखो, उसमें ''यागां ब्रह्मणां व्रहे चित्रं रथः दिव्यां गतं वायु सम्भवे अस्सुतां यजमानः'' वेद का मन्त्र कहता है कि यजमान का रथ बनकर के द्यौ-लोक को जाता है। बेटा! जब हृदय से, मानवीयता से, मन, वचन, कर्म, जब उसके समीप रहते हैं और वह आहुति देता है। अध्वर्यु! से कहता है हे अध्वर्यु! तू साकल्य मुझे प्रदान कर। अध्वर्यु कहते है बेटा! जो

अहिंसामयी कहलाता है। उद्गाता कहते हैं जो विचारणीय और मानो देखो, अपने जटापाठ में उद्गीत गाता है। यजमान मुनिवरो! देखो, अध्वर्यु से कहता है हे अध्वर्यु! मेरे याग में किसी भी प्रकार की हिंसा नही होनी चाहिए। बेटा! विचारों की भी हिंसा नहीं होनी चाहिए। तो ऐसा मुनिवरो! देखो, अध्वर्यु कहलाता है। ब्रह्मणं ब्रह्मे काशस्सुति वेद का मन्त्र कहता है कि वह जो ब्रह्मा है वह अपने मन, कर्म और वेद की आभा को लेकर के प्रकाश में रत होता रहे। उसका शाब्दिक जो वचन है वो यजमान होताओं के द्वारा उसको पवित्र बनाता है, और पवित्र बनाकर के द्यौ-लोक में प्रवेश हो जाता है। द्यौ-लोक में बेटा! रथ की भाँति वो गमन करता रहता है।

ऋषियों की सभा

आओ मेरे प्यारे! देखो, जब यह विचार महर्षि वैशम्पायन के हृदय में आया, तो वैशम्पायन यह विचारने लगे कि इसको हम साक्षात्कार कैसे दृष्टिपात करें। तो मेरे प्यारे! वह चिन्तन में लगे हुए थे। तो महर्षि विभाण्डक और महर्षि प्रवाहण, शिलक और दालम्य और कहीं से भ्रमण करते हुए महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश ये भी कहीं गमन करते हुए मेरे पुत्रो! उस आश्रम में जा पहुँचे। महर्षि लोमश ने कहा प्रभु! ये क्या विचार-विनिमय कर रहे हो? उन्होंने कहा प्रभु! यह वेद का मन्त्र कहता है। तुम्हें बहुत समय हो गया तपस्या करते हुए, कागभुषुण्ड जी ने तो बड़े अनुष्ठान किये हैं। और मैं भी उसी अनुष्ठान की चर्चा आपके समीप लाना चाहता हूँ। कि वेद मन्त्र कहता है कि यजमान का रथ बनकर के द्यौ-लोक में जाता है और मानो हृदयं ब्रह्माः स्वस्त्रे उन्होंने कहा चलो हम ऋषियों का एक समूह मानो एक समय उद्यालक गोत्र में महर्षि सिकामकेतु के यहाँ पहुँचा था। शिकामकेतु उद्यालक ने इसका निर्णय दिया। मेरे प्यारे! देखो, वे दोनों अमृतं ये विचार कर रहे थे। तो नाना ऋषियों का यह समाज महर्षि वैशम्पायन की अध्यक्षता में बेटा! भ्रमण करते हुए वह उद्यालक गोत्र में पहुँचे। उद्यालक गोत्र में बेटा! शिकामकेतु उद्यालक और उनकी पत्नी प्रातः कालीन बेटा! देखो, याग कर रहे थे। और वह देवत्यां उद्यालक शिकामकेतु कह रहे थे देवी! आओ, हम परमात्मा के, देवताओं के, समीप जा करके देवताओं के मुखारबिन्दु में अपनी आहुति प्रदान कर दें। और धर्म और मानवीयता को हम इसमें समर्पित करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देवी ने कहा बहुत प्रियतम शकुन्तका ब्रह्मणे बेटा! शकुन्तका अपने में बड़ी विदुषी, बड़ी विचित्र और वह सदैव विज्ञान में रमण करने वाली थी। मेरे पुत्रो! देखो, वह अपने पति से बोली आओ, भगवन! हे स्वामिन! वेद का जो ज्ञान और विज्ञान है उसे हम जानने के लिये तत्पर हो जायें। मेरे प्यारे! देखो, वह विचार- विनिमय कर ही रहे थे, इतने में ऋषि मुनियों का समूह महर्षि वैशम्पायन की अध्यक्षता वाला वह ऋषि के समीप पहुँचा और ऋषि वर्णं ब्रह्माः दोनों पति-पत्नियों ने अपने आसन को त्याग करके उनका अतिथि किया।

महर्षि कागभुषुण्ड एवं महर्षि लोमश की महानता

और महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश दोनों के चरणो की उन्होंने वन्दना की। तो मुनिवरो! देखो, जब वन्दना की तो इसमें महर्षि वैशम्पायन को एक शØ्ा बनी कि महाराज! तुमने इन दोनों की विशेषता में तुमने चरणों की वन्दना क्यों की? उस समय देवी शकुन्तका ने कहा कि हे प्रभु! मेरा जो जन्म है वो दद्दड गोत्र में हुआ है। और महर्षि लोमश मुनि महाराज दद्दड गोत्रीय उस समाज के वे पुरोहित माने गये हैं। मैं इसलिये पुरोहित पने से, बाल्यकाल से ही इनके चरणों की हम वन्दना करते रहे। और ये जो कागभुषुण्ड जी हैं ये दोनों परस्पर चर्चा करते रहते है। एक दूसरे में इनकी कोई मापदण्ड नहीं है कि इनमें कौन सा विशेष बुद्धिमान है, ये दोनों इस प्रकार की वार्ता प्रगट करते हैं, कि सर्वत्र ब्रह्माण्ड जैसे इनके मस्तिष्क में ही विद्यमान है। ऐसा मानो देखो, हम स्वीकार करते हैं। इसलिये इनके जीवन की धाराएँ बड़ी विचित्र हैं। और इनका ज्ञान और विज्ञान

बड़ा नितान्त माना गया है। तपस्या में ये पारायण हैं। मानो देखो, कागभुषुण्ड जी ने अपने जीवन में बारह-बारह वर्ष के, बारह अनुष्ठान किए हैं और लोमश ऋषि ने अपने जीवन में मान स्वरूप प्राण की धारा को जानते हुए वे पाँचो प्राणों को एक सूत्र में लाकर के ब्रह्म-पगडण्डी को ये प्राप्त कर लेते हैं, ब्रह्म डण्डी तो वहीं प्राप्त कर लेते हैं जो ब्रह्म को जाने वाला, एक मार्ग है, जो रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण को भी त्याग करके जो ब्रह्म डण्डी को अवृत्तियों में प्राप्त कर लेते हैं। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि प्रवाहण और शिलक बड़े प्रभावित हुए। और वैशम्पायन मौन हो गये और वैशम्पायन ने कहा प्रभु! ये देवत्यां ये जो वाक् हमने श्रवण किया, शिकामकेतु उद्यालक मुनि से कहा कि हे प्रभु! इनके तो ये गृह पुरोहित कहलाते परन्तु आपका गोत्र तो परम्परागतों से बड़ा विचित्र चला आ रहा है। आपने विशेषता क्यों प्रबल की? उन्होंने कहा कि हे प्रभु! जब मैं बाल्यकाल में अध्ययन करता रहा तो महर्षि लोमश और ये कागभुषुण्ड जी दोनों हमारे आश्रम में आते रहते और इनके उपदेशामृत हम बाल्यकाल में पान करते। तो एक समय महर्षि लोमश मुनि ने एक वेद मन्त्र मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा उद्गीत रूप में गाया और इन्होंने गाने के पश्चात उसकी विवेचना की और विवेचना करते हुए उन्होंने यह दर्शाया कि विद्यालयों में याग होना चाहिए, और सुहृदय से, जिससे ब्रह्मचारियों की ये यज्ञशाला एक रथ बन करके द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाये। वह द्यौ-लोक जब इन्होंने यह वर्णन किया तो हमारे हृदयों में वह गठित हो गयी। जब दूसरे वेद मन्त्र कागभुषुण्ड जी ने उच्चारण कराया और उन्होंने कहा ''ब्रह्मणे त्रातं बृहि वाचन्नमं ब्रहे कृतं द्यौ-लोकां रथं अग्नं बृह्वि कृतः'' ये वेद मन्त्र जब कागभुषुण्ड जी ने उच्चारण किया तो लोमश ऋषि ने इसकी विवेचना की और यह कहा कि ये वेद मन्त्र यह कहता है कि यह ''रथं ब्रह्माः शब्दां कायुक्तं वृत्ति देवन्धाम'' मानो देखो, इनकी वाणी के साथ में इनका चित्र भी बनकर के द्यौ-लोक में रमण करेगा और वह चित्र बनकर के अन्तरिक्ष में लय हो जाएगा। ये वाक् उन्होंने जब कहा तो ये बाल्य काल में हमारे हृदयों में सङ्गठित हो गये तो ये बाल्यकाल के हमारे इस विज्ञान के ये आचार्य गुरुत्व कहलाते हैं।

महर्षि शिकामकेतु की विज्ञानशाला

तो मानो बेटा! जब उन्होंने ऐसा कहा तो महर्षि प्रवाहण ने कहा हे प्रभु! तो हमें वर्णन कराइये जो तुमने जाना है। ये विवेचना तो हमने जान ली है तो बेटा! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्यालक के यहाँ ऐसे-ऐसे यन्त्र, विज्ञान के विद्यमान थे कि मुनिवरो! देखो, वह अग्नि की ब्रह्मणा धाराओं पर शब्द, जब विद्यमान होता है, तो वह द्यौ-लोक में जाता है। और द्यौ-लोक में वो स्थिर रहता है। तो महर्षि शिकामकेतु उद्यालक की यह विशेषता रही है कि उन्होंने अपने पूर्वजों का दर्शन करना प्रारम्भ किया। यन्त्रों के द्वारा पूर्वजों का दर्शन, यन्त्रों के द्वारा उन्होंने पिता, महापिता, पचासवें महापिता का वो दर्शन करते रहे। अपनी यज्ञशालाओं में और अपनी विज्ञानशालाओं में मेरे प्यारे! उनके क्रियाकलाप, उनके शब्दः, उनके उद्गीत, मानो देखो, सब यन्त्रों में दृष्टिपात आते। तो मेरे प्यारे! देखो, नाना चित्रावलियों का उन्होंने दर्शन कराया, अग्नि की धाराओं पर, यज्ञशाला और यजमान के शब्द, देखो, यज्ञ का आकार का रथ बनकर के बेटा! वो द्यौ-लोक को जाता है। ये सर्व विज्ञान वैदिक साहित्य में प्रायः हमें प्राप्त होता रहता है। तो मेरे पुत्रो! यज्ञं ब्रह्माः उन्होंने सर्वत्र विज्ञानशाला में अपने में दर्शन कराया कि ये मेरे सातवें पिता है, ये आठवें पिता हैं, उन्होंने बेटा! पचासवें महापिताओं तक का दर्शन कराया। उनके क्रियाकलाप भी उन्हें दृष्टिपात आते रहे। मेरे पुत्रो! आगे चलकर के उन्होंने सौवें महापिता का दर्शन कराया।

याग की अनुपमता

तो मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान अपनी परिधि में परम्परागतों से बेटा! ऋषि, मुनियों के और वैज्ञानिकों के मध्य में बेटा! नृत करता रहा हूँ। आज मैं, इस सम्बन्ध में विशेष तुम्हें विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार केवल

यह कि याग अपने में बड़ा विचित्र रहा है। याग अपनी परिधि में भ्रमण करता रहा है बेटा! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्यालक ने महर्षि लोमश से ये कहा कि ये प्रभु! आपने इसका बड़ा धनिष्ठतम में अध्ययन किया है आप भी कुछ शब्दों का उच्चारण कीजिये।

महर्षि लोमश के याग पर विचार

तो महर्षि लोमश मुनि महाराज ने कहा कि मेरे विचार में जो तुम उच्चारण कर रहे हो, तुमने जाना है ये वेदामृत कहलाता है। ये वेद के मन्त्रों में विद्यमान है ये विज्ञान। तो इसका हमने बहुत समय पूर्व अध्ययन किया था उस समय बेटा! महर्षि लोमश मुनि महाराज का बड़ा आयु था बड़ा विचित्र इनका आयु मानो देखो, बड़ा विशाल था वे शिकामकेतु उद्यालक से भी 185 वर्ष उनकी विशेष आयु थी। तो मेरे प्यारे! उनका जीवन बड़ा ब्रह्म में विचरण करता रहता था।

यज्ञ में भावनाओं का प्रभाव

तो आज बेटा! विशेष चर्चा न करता हुआ कागभुषुण्ड जी की चर्चा कर रहा था। कागभुषुण्ड जी मानो देखो, अपने में बड़े विचित्र और अनुष्ठान करने वाले थे। एक समय बेटा! महर्षि कागभुषुण्ड जी ने चर्चा की, कि एक समय मैं अनुष्ठान कर रहा था तो मानो दद्दड़ गोत्र के एक श्वेती मुनि महाराज मेरे द्वार पर आए, वो विद्यालय के ब्रह्मचारियों में मानो देखो, रजोगुण छा गया था। किसी शब्द पर विवेचना करते हुए, वे ब्रह्मचारी नहीं जान पा रहे थे, तो उन्होंने ब्रह्मचारियों को दण्डित किया और वे उसी क्रोधाग्नि में, वह जैसे अनुष्ठान कर रहे थे कागभुषुण्ड जी, तो यज्ञ हो रहा था उस यज्ञशाला में, हूत करते रहे। जैसे ही उन्होंने हूत किया तो उन्होंने अपने आन्तरिक जगत से कागभुषुण्ड जी ने दृष्टिपात किया कि ये तो याग भ्रष्ट हो गया है। याग में इसकी अशुद्ध भावनाएँ, अशुद्ध तरंगे मानो देखो, अन्तरिक्ष में, द्यौ-लोक में जा रही हैं। उन्होंने याग शान्त कर दिया। और ये कहा हे ऋषिवर! आपने मेरे याग को अशुद्ध प्रवृत्ति से अशुद्ध कर दिया। मेरे पुत्रो! देखो, वे आश्चर्य में हो गये और उन्होंने कहा प्रभु हाँ, मैं आज ब्रह्मचारियों को दण्डित करके और रजोगुण मेरे हृदय में समाहित हो गया था। उन्होंने कहा तो आप यज्ञं ब्रह्माः मानो देखो, उन्होंने गायत्री और वेद मन्त्रो का उद्गीत गाया और ऋषि से कहा कि तुम मेरे आश्रम से प्रस्थान करो तब आना जब तुम्हारा हृदय शुद्ध हो जाये और पवित्रतम् में तुम परिणत हो जाओ। यह उच्चारण कहते हुए ऋषि अपने आसन पर विद्यमान हो गये।

मेरे पुत्रो! देखो, चित्र जब दृष्टिपात आ रहे थे, तो उनके सौवें और पचासवें महापिता की सर्वत्रता का दृष्टिपात कर रहे थे। माता और पिता मानो उनके चित्र, उनका क्रियाकलाप, तो मेरे पुत्रो! देखो, उसी में वो मौन हो गये। उन्होंने कहा धन्य है भगवन्! ये हमने तुम्हें साक्षात्कार हम अब तक नौदामय मन्त्रों में इनका उच्चारण करते रहे परन्तु साक्षात्कार अब हमें दृष्टिपात हुआ।

ऋषियों की वंश परम्परा

आज का विचार बेटा! मैं विशेष न देता हुआ आब्रहे मानो देखो, महर्षि इत्यादियों का जो समाज था, वह सन्तुष्ट हो करके विद्यालय से प्रस्थान किया। शिकामकेतु देखो, उद्यालक गोत्र यह बड़ा विचित्र था। उद्यालक गोत्र में बेटा! लगभग 12500 वंशलज उद्यालक गोत्र के समाप्त हो गये। और मुनिवरो! देखो, उद्यालक गोत्र का जो निकास वह श्वेणकेतु ऋषि गोत्र से उत्पन्न हुआ था। श्वेणकेतु गोत्र का जो निकास है वह वायु मुनि से हुआ था, वायु गोत्र से, और वायु गोत्र के 61,500 वंशलज समाप्त हो गये। मेरे प्यारे! देखो, वायु गोत्र का जो निकास हुआ था वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ था। तो मेरे पुत्रो! देखो, यह वंशलजों का तो वर्णन मैं तुम्हें नहीं करने जा रहा हूँ। विचार केवल यह कि मुनिवरो! देखो, अपने में कितने पूर्णता में ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ,

भौतिक विज्ञानवेत्ता नाना प्रकार के बेटा! उड़ान उड़ने वाले ऋषि हुए हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार मैं विशेष न देकर के अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् दधिमा रथं यज्ञं गताः वायु वश्वंजनाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव याग के सम्बन्ध में अपनी बड़ी विचित्र उड़ानें उड़ रहे थे क्योंकि याग के ऊपर ऋषि-मुनियों ने बड़ा अनुसन्धान किया है। और उसके ऊपर बड़ा चिन्तन और मनन किया है। और मनन क्या वो तपस्याएँ भी की हैं। एक-एक वाक् को जानने के लिये उन्होंने प्रकृति और पिण्ड का और ब्रह्माण्ड का मिलान किया है। अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव याग के सम्बन्ध में बड़ी विचित्र वार्ता प्रकट कर रहे थे। मानो प्रायः ज्ञान और विज्ञान की पराकाष्ठा वाले विचार थे। ज्ञान और विज्ञान अपने में बड़ा विचित्र रहा है, परम्परागतों से। परन्तु आज हमारा जो ये वाक् है, ये आज हमारी वाणी, ये मृत मण्डल में प्रवेश हो रही है, उसमें गमन कर रही है और जहाँ हमारी ये वाणी जा रही है वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ है। और मेरा अन्तरात्मा सदैव यजमान के साथ रहता है। हे यजमान! मेरा अन्तरात्मा मानो ये कहता रहता है कि तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तू अग्नि को, देवताओं का मुख बनाकर के हूत कर रहा है।

वर्तमानकाल

यह जो वर्तमान का काल है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो इस काल को जानते नहीं हैं, परन्तु यह जो काल है इसको मैं वाममार्ग का काल कहा करता हूँ। वाममार्ग उस काल को कहते हैं जहाँ द्रव्य का दुरुपयोग होता है। जिस काल में द्रव्य का सदुपयोग न होकर के द्रव्य का दुरुपयोग होता है। सुरा, सुन्दरी और द्रव्य में मानव की आस्था बलवती हो जाती है। तो उस काल को मैं वाममार्ग कहता रहता हूँ परन्तु देखो, राष्ट्र भी जो वर्तमान में चल रहा है वो वाममार्ग ही कहलाता है। मैं उसको विशेष राष्ट्र नहीं कहता हूँ।

राष्ट्र में अहिंसा

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब राष्ट्रवाद की चर्चा करते हैं, तो वह यह कहते हैं, कि राजा के राष्ट्र में, राजा को अध्वर्यु कहते हैं। और अध्वर्यु उसे कहते है जहाँ हिंसा न हो। तो अध्वर्यु ब्रहे देखो, अध्वर्यु उसे कहा जाता है जो हिंसा से रहित हो। इसलिये आधुनिक काल, वर्तमान का जो राष्ट्र है वो अध्वर्यु न बनकर के हिंसा को बलवती बना रहा है। वह अहिंसा नहीं, हिंसा में परिणत हो रहा है।

रामराज्य वा पाण्डुराज्य का आधार

देखो, रामराज्य की कल्पना कर रहा है। आज का मानव रामराज्य की कल्पना कर रहा है। आज का मानव पाण्डु राष्ट्रों की कल्पना कर रहा है। पाण्डु का जीवन मुझे स्मरण है कि पाण्डु ने जिस समय राष्ट्र को अपनाया था तो अपनाने से पूर्व उन्होंने देखो, इक्कीस वर्ष तक राज किया। और इक्कीस वर्ष के राज्य में उन्होंने इस पृथ्वी पर कोई राष्ट्र ऐसा नहीं था, जिस राष्ट्र में पाण्डु न गया हो और अपने राष्ट्र को उन्होंने बलवती न बनाया हो।

नाग जाति को शरण

उन्होंने देखो, पातालपुरी में जाकर के क्रान्ति करायी उसमें देखो, अप्रियता आ गयी थी। जब क्रान्ति हुई तो वहाँ से देखो, नाग नाम की जाति जो सम्प्रदाय इस समाज में आया। इस भारत भूमि पर आया, देखो, पाण्डु के राष्ट्र में आया; जिसको देखो, भगवान कृष्ण ने उस नाग सम्प्रदाय को अपने में मिलाने का प्रयास किया। और उन्होंने समुद्र के तट पर एक कालिदह स्थान था उसमें नाग समाज को देखो, स्थित कर दिया था। विचार-विनिमय क्या देखो, उस समय भगवान् कृष्ण की आयु लगभग 51 वर्ष की थी जब नाग सम्प्रदाय को

उन्होंने अपने में मिलाने का प्रयास किया। परन्तु देखो, मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रकट नहीं कर रहा हूँ।

महाराज पाण्डु का आहार-विहार

मुझे जो उच्चारण करना है, उद्गीत गाना है कि आधुनिक काल का समाज उन राष्ट्रों की कल्पना कर रहा है, उनको मानो देखो, नाटकीय रूपों में उनका रूपान्तर किया जा रहा है। मैं मंगलं व्रहे परास्तुति अरे भोले राजाओ! पाण्डु का आहार और व्यवहार विचारो। पाण्डु जब प्रातःकाल में अपने आसन को त्यागता था तो उष्णता को पान करता था। उसके पश्चात् उस का मानो देखो, अध्वर्यु रूप बना करके वो ऐसे अन्न को पाता था जिसमें हिंसा न हो। आधुनिक काल के जो राष्ट्रवेत्ता हैं वे प्रातःकालीन उस अन्न को पान करते हैं जिसमें हिंसा हो। अध्वर्यु नहीं देखो, जिसमें हिंसा हो। नाना प्राणियों को अग्नि में तपाकर के उनके रसों का पान किया जाता है। विचारा जाता है, जब ऐसा राष्ट्र, समाज में हो जाता है तो समाज में शान्ति स्थापित नहीं होती और यह समाज हिंसक बन जाता है। और समाज जब हिंसक बन जाता है। तो हिंसक बनता समाज अपने कर्तव्य का पालन न करता हुआ वह केवल अधिकार की पुकार करता और अधिकार की पुकार एक समय देखो, रक्त भरी क्रान्ति में परिवर्तित हो जाती है। तो विचार आता रहता है। इसलिये उन विचारों को हमें धारण करना है। जिन विचारों में मानो देखो, हिंसा न होकर के अहिंसामयी हो क्योंकि अहिंसामयी जीवन पवित्र कहलाता है। हिंसा का जीवन समाज को अग्नि के मुखारबिन्दु में परिणत कर देता है।

तो मैंने बहुत पुरातन काल से अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा देखो, अभी-अभी कागभुषुण्ड जी का मेरे पूज्यपाद एक वाक् प्रकट कर रहे थे। आधुनिक काल का समाज ऐसा विकृत बन गया। ऐसे महान अपने पूर्वजों को, तपस्वियों को, वह एक काग की उपाधि प्रदान कर रहा है। जिनका जीवन, जिन्होंने 185 वर्ष तक नाना प्रकार के अनुष्ठानों में लगकर के, अपने जीवन को पवित्र किया और तपस्या में परिणत किया वे परमात्मा की आभा और देखो, मोक्ष की पगडण्डी को जानने वाले बनें। वह उनका देखो, पक्षियों के रूप में नाना प्रकार के उनके रूपान्तर करते रहते हैं।

धर्म

अरे भोले समाज! अरे भोले राजन्! यह तेरा कर्तव्य है कि तेरे राष्ट्र में ये नाना प्रकार के सम्प्रदाओं की प्रतिभा नष्ट होनी चाहिए। ये नाना प्रकार का जो सम्प्रदाय जो राष्ट्र होता है, इस राष्ट्र में एक समय आता है कि अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। मानो देखो, मुझे स्मरण है बहुत-सा काल देखो, दो पक्ष हैं हमारे यहाँ। मुझे स्मरण है एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एक सभा हुई थी और भारद्वाज मुनि ने यही कहा था कि संसार जब अपने कर्तव्य का पालन करने लगता है। कर्तव्यवाद किसे कहते हैं। धर्म को अपनाने लगता है। जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के विचारों को व्यक्त करने लगता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव के विचारों में यही आया कि नाना धर्म नहीं होते, धर्म एक वचन कहलाता है। आज का राष्ट्र कहता है, हम नाना धर्मो को स्वीकार करते हैं। अरे, तुम नाना धर्मों को स्वीकार नहीं कर रहे, तुम अपने देखो, स्थान और देखो, पद की लोलुपता में लगे हुए हो। ये राष्ट्र, ये समाज कहीं चला जाए, अग्नि में चला जाए, परन्तु ये जो नाना धर्मों की चर्चा करते हो; अरे राजन! तेरे राष्ट्र में देखो, जब तुम निष्पक्ष कहते हो, निधर्म कहते हो, तो जिस राजा के राष्ट्र में धर्म नहीं है, मानो देखो, कर्तव्य नहीं है, वो तो अपंग राष्ट्र कहलाता है। उसे मैं अपंग कहता रहता हूँ। नाना धर्म, तो देखो, धर्म तो एक ही कहलाता है। नेत्रों का धर्म सुदृष्टिपात करना है। कुदृष्टिपात उस का धर्म नहीं, इसलिये मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में देखो, धर्म समाहित रहता है। नेत्रों में जो सुदृष्टिपान करता है वह मानो उसका धर्म है, नेत्रों का धर्म है। वह कोई भी मानव हो, किसी भी सम्प्रदाय का मानव हो। परन्तु देखो, धर्म केवल एकोकी कहलाता है। वह

एक वचन है। मानो देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में एक वाक् कहा, कि राजा यदि अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है। परन्तु राजा को तो राष्ट्र ऊँचा बनाना है ही नहीं। उसे तो अपने पदों की आभा में परिणत होना है।

विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यो में शास्त्रार्थ

मानो देखो, इस प्रकार का जब बुद्धिमान समाज, महान बनने के लिये तत्पर होता है तो राष्ट्र का कर्तव्य है कि राजा को जितने सम्प्रदाय के आचार्य होते हैं वे आचार्यों को एकत्रित करके और राजा ब्रह्मवेत्ता हो। और ब्रह्मवेत्ता जब राजा होता है तो वह विद्यमान होकर के शास्त्रार्थ में मध्यस्थता करता है। और जब नाना सम्प्रदायों का शास्त्रार्थ होता हैं। तो इसमें मानो दर्शन और विज्ञान जहाँ सुगठिता होते हों उसको अपना लेना चाहिए और जितनी रूढ़ियाँ हो उनको शान्त कर लेना चाहिए। जिससे राष्ट्र की रक्षा हो जाये, मानव समाज की रक्षा हो जाये। मानव समाज को जो एक दमन किया जाता है। दमनता से रक्षा हो जाये। हे राजन! तुझे ब्रह्मवेत्ता बनना होगा। और जब राजा, ब्रह्म के नामों से ही देखो, जिसके हृदय में आø ाक्षा ही नहीं हो, वह जानता ही न हो तो वह कैसा राजा है। विचार आता रहता है।

राष्ट्रीय एकता

मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में कहा कि राजा को चाहिए कि नाटकीय क्रियाकलाप कैसा हो रहा है समाज में। यह राजा का कर्तव्य है कि प्रकृति के विरुद्ध और परमात्मा के नियम के विरुद्ध जो भी धर्म या धर्म के नामों पर देखो, वेदम् विडम्बना कर रहा है, उसे नष्ट कर देना चाहिए। राजा का ऐसा राष्ट्र होना चाहिए। राजा का कर्तव्य है कि वह अपने राष्ट्र को एकोकी चरण में लाने का प्रयास करे। देखो, धर्म एक है रूढ़ियाँ अनेक हैं। इसलिये धर्म एक रहना चाहिए और रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। ऐसा राजा होना चाहिए। जब राष्ट्र इस प्रकार का होता है तो समाज पवित्र होता है।

आज मैं विशेष चर्चा न करता हुआ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से तो क्षमा चाहता ही रहता हूँ परन्तु देखो, विचार यह चल रहा था; हे यजमान! आज का जो समाज है, वह राजा से लेकर के प्रजा तक मानो देखो, वह सुरा, सुन्दरी और द्रव्य के दुरुपयोग में लगा हुआ है अपने स्वास्थ्य को नष्ट कर रहा है। हे मानव! तुझे अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिये, मानवता को लाना है। और मानवीयता को अपना करके मानव दर्शन को तू अपने समीप लाकर के, याग जैसे ऊर्ध्वा क्रियाकलापों में तुझे लगना है। जिससे दूष्णाता समाप्त हो जाये। और पवित्रता और सुगन्धि आ जाये, समाज में महानता आ जाये। इन्द्रियों का धर्म है सु और वही देखो, धर्म है, जो मानव की पाँच इन्द्रियों में समाहित हो रहा है। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, विचार केवल यह कि हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। इसके साथ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अब आज्ञा पाऊँगा।

(पूज्य गुरुदेव) देखो मुनिवरो! अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में जो एक राष्ट्र के प्रति दाह है, विडम्बना है, वह बड़ी विचित्र है इनके वाक् कई बड़े विचित्र आए हैं जो पूर्व में भी प्रकट किये हैं। इनके हृदय में यह वाक् कि राजा ब्रह्मवेत्ता हो, रूढ़िवादों को नष्ट करने वाला हो, और धर्म को अपनाने वाला; और देखो, राजा का जो निर्वाचन प्रणाली है, वह भी इन्होंने एक समय प्रकट की, कि मूर्ख समाज जब राष्ट्र को चुनौती देता है तो वो राष्ट्र राजा भी मूर्ख हुआ करता है। परन्तु देखो, राष्ट्र का निर्वाचन, बुद्धिमानों के द्वारा, ब्रह्मवेत्ताओं के द्वारा होना चाहिए। परम्परागतों से ऐसा होता रहा है। और अपठित समाज अब राष्ट्र को चुनौती देता है और उसे निर्वाचित करता है। तो वह राष्ट्र भी, राजा भी अपठित होता है। इसलिए अपठित का अभिप्राय यह कि अक्षरों का बोधी नहीं, उसे ब्रह्मज्ञान और राजा अपने में तपश्चर गमन करने वाला हो। ऐसा राजा राष्ट्र

को ऊँचा बनाता है। जब रामराज्य की कल्पना है तो बड़ी विचित्रता है। मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में राष्ट्र और समाज के प्रति बड़ी दाह है, एक विडम्बना है, उनके हृदय में यह कि राष्ट्र पवित्र होना चाहिए, अध्वर्यु होना चाहिए हिंसा नहीं रहनी चाहिए। ये आज का विचार अब समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं ब्रह्माः वायु गतं माहं आपाः। ओ३म् जनिता रेवं आपाः रथं दिव्यामानं आपाः। अच्छा भगवन्! आज्ञा। दिनांक 9.2.89। स्थान ताजपुर, बुलन्दशहर

६ महर्षि भारद्वाज का विज्ञान १२ ०२ १९८९

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद वाणी में परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि जितना भी ये जड़ जगत अथवा चेतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा हैं, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वो मेरा देव दृष्टिपात आता रहता है। क्योंकि वह सर्वज्ञ है, और वह प्रतिभाशाली है, मानो जितना भी यह जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह प्रायः दो प्रकार का जगत है। एक चेतन्य और एक जड़वत है। हमारा प्रत्येक वेद मन्त्र जड़ और चेतना दोनों की ही विवेचना करता रहा है। संसार में जितना भी मानववाद है वह सर्वत्र मानो दोनों प्रकार की विवेचना में लगा हुआ है। ये चेतना का जो स्वरूप माना गया है। जहाँ ज्ञान और प्रयत्न है, वहाँ चेतना का स्वरूप है और जितना भी यह ब्रह्माण्ड है यह पिण्ड रूप में है। उसमें गति भी है। प्राणेश्वर विद्यमान रहता है। परन्तु वह जड़वत माना गया है जहाँ ज्ञान और विज्ञान से परिपूर्ण होने पर भी परन्तु यदि उसमें ज्ञान और प्रयत्न नहीं है तो वो जड़वत् माना गया है।

ऋषियों द्वारा संसार के सम्बन्ध में विचार

आओ, मुनिवरो! आज मैं तुम्हें जड़ और चेतना की विवेचना करने के लिये नहीं आया। आज तुम्हें मैं यह उच्चारण करने के लिये कि हमारा वेद मन्त्र क्या कहता है? वेद मन्त्र कहता है, "मनुष्यं ब्रह्माः लोकां वायु सम्भवः" वेद की आख्यिका कहती है। कि मानव को उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर प्रायः विचार विनिमय करना चाहिए। प्रत्येक मानव जब परमपिता परमात्मा की विवेचना में जब परिणत हो जाता है, तो माना उसे सर्वस्व सम्पदा प्राप्त हो जाती है। तो मुनिवरो! देखो, आज का हमारा वेद मन्त्र जहाँ ये कह रहा है वहाँ, बेटा! मैं तुम्हें ऋषि-मुनियों के क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ ऋषि-मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान होकर के इस संसार के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करते रहे हैं। मानो वेद मन्त्र उनके समीप रहा है। और वे गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होकर के अपने में विचार-विनिमय करते रहे है। मुझे वो काल स्मरण आता रहता है, जहाँ मुनिवरो! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में नाना ऋषि-मुनियों का समाज एकत्रित होकर के बेटा! संसार के सम्बन्ध में, प्रायः विचार-विनिमय करते रहे हैं। और ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ते रहे हैं। क्योंकि मानव का ये कर्तव्य रहा है, उसका ये स्वभाव भी रहा है, कि वो प्रत्येक वस्तु से प्रेरणा प्राप्त करता हुआ, अपने में प्रेरणादायक बनकर के, उसके ऊपर नाना प्रकार का आविष्कार करता है। नाना प्रकार का विचार-विनिमय करता हुआ अपने को उसी प्रकार का बनाने का प्रयास करता रहा है।

महर्षि भारद्वाज

मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण है एक समय बेटा! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज इत्यादि मुनि मानो देखो, एक समय वे भारद्वाज मुनि के आश्रम में पहुँचे। भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना ऋषि मुनियों का समूह जब एकत्रित हुआ तो देखो, आश्चर्य से ऋषि बोले कि हे प्रभु! आज यह क्या कारण है जो मेरे आश्रम में ब्रह्मवेत्ताओं के पधारने का कोई न कोई तो कारण है? महर्षि भारद्वाज मुनि ने जब ऐसा कहा तो दोनों ने व्रहे व्रतम् महर्षि प्रवाहण मुनि ने यह कहा कि महाराज! हमने यह श्रवण किया है कि तुम दोनों प्रकार की उड़ानें उड़ते रहते हो। तुम ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ते रहते हो। हम ये जानने के लिये आये हैं कि तुम्हारा जो आविष्कार है, तुम्हारी जो विज्ञानशाला है, तुम्हारा जो मानो देखो, मार्ग वृत्यां ब्रह्मेः जो योगशाला है, हम उसको दृष्टिपात करने के लिये आये हैं।

यज्ञाग्नि की तरंगों पर अध्ययन

तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न होकर के उन्होंने बेटा! देखो आसन दिया आसन देने के पश्चात उनका अतिथि किया और अतिथि करने के पश्चात उन्होंने कहा आओ, भगवन! मैं आपको अपनी विज्ञानशाला को दृष्टिपात कराना चाहता हूँ। मेरे पुत्रो! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज अपनी विज्ञानशाला को दृष्टिपात कराने लगे उन्होंने कहा हे प्रभु! मैंने यज्ञ के माध्यम से इस विज्ञान को जानने का प्रयास किया है। मेरे यहाँ एक विज्ञानशाला के रूपान्तर में मानो एक यज्ञशाला भी है। जहाँ यज्ञशाला में विद्यमान होकर के मैं ऊर्ध्वा में याग करता रहा हूँ। देखो, हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की यज्ञशालाएँ हैं। उन यज्ञशालाओं को जानकर के उनमें से जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होती है, उसके ऊपर हम अन्वेषण करते हैं।

और विचार-विनिमय करके नाना प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों का विस्तार करते है मेरे पुत्रो! देखो, सबसे प्रथम वे अपनी उस विज्ञानशाला में ले गये जहाँ मुनिवरो! उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था। जिस यन्त्र में जैसे अवृत्तियाँ प्रतीत हो रही थीं कि मानो एक मानव, एक स्थली पर विद्यमान है और उसके प्रस्थान करने के ढाई घड़ी के पश्चात बेटा! वो यन्त्र उस मानव का चित्र ले लेता है तो मुनिवरो! देखो, जब ये चित्र उन्होंने दृष्टिपात किया तो ऋषिवर बड़े प्रसन्न हुए, ऋषियों ने कहा, धन्य है प्रभु! आप ने इस यन्त्र को जाना है। हमारा अन्तरात्मा बहुत प्रसन्न है।

भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान की तुलना

और भी नाना प्रकार के यन्त्रो को दृष्टिपात कराने लगे। मेरे पुत्रो! महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धी, ब्रह्मचारी यज्ञदत्ताः, ब्रह्मचारी रोहिणी वृत्तिका और पनपेतु ब्रह्मचारी इत्यादि अध्ययन करते थे। और वे अध्ययन के पश्चात् मानो देखो, आविष्कार में लगे रहते थे। ज्ञान और विज्ञान क्योंकि हमारे यहाँ दोनों प्रकार का विज्ञान परम्परागतों से विचित्र माना गया है। एक भौतिक विज्ञान है तो दूसरा आध्यात्मिक विज्ञान कहा गया है। मानो देखो, आध्यात्मिकवाद में तो आत्मिकवेत्ता यह चाहता है कि मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। वह अज्ञान को दूर करना चाहता है परमात्मा के निकट और परमात्मा की जो आनन्दमयी पगडण्डी है उसे वो ग्रहण करना चाहता है। एक वह विज्ञानवेत्ता है जो नाना प्रकार के अणु और परमाणुओं को एकत्रित करने के लिये लगा हुआ है, उसमें नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। जैसे भारद्वाज मुनि के यहाँ इस प्रकार का एक यन्त्र था। जैसे यज्ञशाला में याग करने वाले ऋत्विज याग कर रहे हैं, और उनका अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होकर के शब्द और क्रियाकलाप और उनका चित्र मुनिवरो! देखो, यन्त्र में दृष्टिपात आता रहता है। ऐसे आविष्कार भारद्वाज मुनि ने किये।

रक्त बिन्दु से मानव चित्र

तो भारद्वाज मुनि महाराज ने और भी अपनी विज्ञानशाला में नाना प्रकार के यन्त्रों-यन्त्रशाला में ले गये। एक यन्त्र उन्होंने ऐसा निर्माण किया था, मानो देखो, एक रक्त का बिन्दु उन्होंने प्रवेश किया और जिस मानव का वो रक्त का बिन्दु है, उस का उन्हें चित्र दृष्टिपात आने लगा। जितने रक्त बिन्दु है उतने चित्रों का प्रायः दर्शन होता रहता था।

भारद्वाज मुनि बोले कि महाराज! ये ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी कवन्धी दोनों का ये चिन्तनमयी एक यन्त्र उन्होंने निर्माण किया है जो वेद मन्त्रों में, वेद मन्त्र कहता है ''चित्रं रथं रन्ध्रे व्रतां वायु सम्भवब्रहे कृतं अग्नि'' मानो देखो, यन्त्रों में नाना प्रकार के चित्रों का वर्णन आता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, जब भारद्वाज मुनि महाराज ने

इस प्रकार उन्हें निर्णय कराया और भी नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्णय कराया। मेरे पुत्रो! देखो, सर्वत्र विज्ञानशाला में भ्रमण करने के पश्चात नाना ऋषि मुनि बेटा! एक स्थली पर विद्यमान हो गये। भारद्वाज मुनि महाराज ने मुनिवरो! देखो, जब कृतम् उन्होंने कहा, कहो भगवन! मेरी विज्ञानशाला आपको कैसी प्रतीत हुयी।

विज्ञान के अन्तिम परिणामों की विवेचना

तो उस समय देखो, वैशम्पायन और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज दोनों ने एक प्रश्न किया कि हे भारद्वाज! तुम्हारा गोत्र तो बहुत काल से चला आ रहा है। उसमें आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता तो बहुत हुए है परन्तु हम ये जानना चाहते हैं कि भगवन्! देखो, ये जो विज्ञान है इसका अन्तिम परिणाम क्या होता है? आपके यहाँ ब्रह्मास्त्र है, वरूणास्त्र है और अग्ने और नाना प्रकार की चित्रावलियाँ हैं। हे प्रभु! हम जानना चाहते हैं, इस विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्या होगा? तो भारद्वाज मुनि बोले कि हे ब्रह्मवेता! हे ब्रह्मवर्चासि! तुम अपने आसन पर विराजमान हो जाओ। उनकी पङ्क्तियाँ बन गयी भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना निर्णय देना प्रारम्भ किया कि जिस भी काल में, समाज में, या राष्ट्र में विज्ञान बलवती हो जाता है, और विज्ञान मानो देखो, पराकाष्ठा पर चला जाता है, तो विज्ञान के दो स्वरूप बना करते हैं। एक विज्ञान वह होता है जो मानो समाज को निकृष्ट बना देता है। और एक विज्ञान वह है जो समाज को, राष्ट्र को ऊर्ध्वा गति दे देता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा प्रभु! यह कैसे? उन्होंने कहा ये नाना प्रकार की चित्रावलियाँ आज हमने तुम्हें दृष्टिपात करायीं। एक-एक रक्त के बिन्दु में मानव के चित्र दृष्टिपात आते हैं, और मानो एक रक्त का बिन्दु कहीं भी, किसी भी मानव का हो चाहे वो संसार में नहीं है, उसका भी चित्र यन्त्रों में दृष्टिपात आता रहा है। परन्तु उसके पश्चात भी ऐसी-ऐसी जो चित्रावलियाँ हमने जानी हैं, इन चित्रावलियों में नाना प्रकार की प्रतिभा मानव के जीवन की आनी चाहिए।

कर्त्तव्यवाद की प्रतिष्ठा

जैसे ऋषि-मुनि हैं ऋषि-मुनियों का कर्तव्य है इसीलिये मानव जब कर्तव्यवादी बन जाता है, उस काल में यह समाज पवित्र बन जाता है। कर्तव्य किसे कहते हैं? मेरे पुत्रो! देखो, जो भी जहाँ लगा हुआ है, अपने कर्तव्य का पालन करे। जिससे आत्मा की जो पुकार है, आत्मा की जो प्रेरणा आती रहती है। उसके अनुसार मानव को क्रियाकलाप अथवा कर्तव्य करना चाहिए। चाहे वो राष्ट्रवादी हो, चाहे वो समाजवादी हो, चाहे मुनिवरो! देखो, वो यौगिक हो, चाहे वो क्रियात्मक क्रियाकलापों में मानो रत रहने वाला हो। एक मानो धर्म की पुकार कर रहा है।

धर्म किसे कहते हैं? बेटा! धर्म मानव की इन्द्रियों में समाहित रहता है। जब राष्ट्र में, राष्ट्रवेत्ताओं में यह विचार आता है कि प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है वो धर्म है जैसे नेत्रों का धर्म है सुदृष्टिपात करना मानो देखो, कुदृष्टिपात करना नहीं है। जब वह सुदृष्टिपान करेगा तब उसका अन्तरात्मा प्रसन्न हो जायेगा और जब मुनिवरो! देखो, वह अभद्रता में दृष्टिपात करेगा तो अन्तरात्मा उसकी दुरिता को पुकारने लगेगी। मेरे प्यारे! देखो, सुदृष्टिपात करना नेत्रों का धर्म कहलाता है। वाणी का सत्य ही उच्चारण करना धर्म है। मेरे प्यारे! घ्राण का सुगन्ध लेना ही धर्म है। वाणी अमृतं ब्रह्मे देखो, अमृत को बिखेरती रहती है। इसी प्रकार बेटा! श्रोत्रों में शब्दों को मानव ग्रहण करता रहता हैं वही शब्दता में रमण कराने वाला है वही उसका धर्म कहा गया है।

धर्म और कर्त्तव्यवाद

तो इसलिये प्रत्येक मानव को धर्म और कर्तव्य को, कर्तव्य का नाम ही बेटा! धर्म है। जब उसे अपनाता रहता है तो बेटा! वह मानो देखो, ''ब्रह्मणे वाचप्रवाहाः लोकां वरूणां ब्रह्माः वस्ति देवाः'' मेरे प्यारे! वो देवता बन जाता है। और वह जब उनके क्रियाकलाप कर्तव्य जब देखो, वैज्ञानिक चित्रों में आने प्रारम्भ हो जाते हैं तो यह

समाज पवित्र हो जाता है। इस समाज में एक मानवता आ जाती है। विज्ञान के माध्यम से राष्ट्र ऊँचा बन जाता है। और राष्ट्र में कुरीति नहीं रह पाती। परन्तु जब कर्तव्य से मानव विहीन चला जाता है, जैसे मेरी प्यारी माता है वह मानो देखो, प्रीति करना उसका कर्तव्य है। अति मोह में जाना उसका कर्तव्य नहीं है। बालक की वो पालना कर सकती है गर्भस्थल से लेकर के और मानो देखो, वृत्तियों तक अपने में उसका पालन कर रही है। ज्ञान दे रही है, प्रकाश दे रही है। परन्तु देखो, उसे वो नष्ट नहीं कर सकती क्योंकि वह परमपिता परमात्मा की धरोहर है। वह परमात्मा की धरोहर कहलाता है। तो माता उसे नष्ट नहीं कर सकती पालना करना उसका कर्तव्य है। ज्ञान देना उसका कर्तव्य माना गया है। इसी प्रकार मानव देखो, अपने क्रिया में लगकर के जब कर्तव्यवाद में लग जाता है मानो देखो, जैसे योगी अपनी समाधि में समाधिष्ट होकर के मेरे प्यारे! प्रत्येक इन्द्रियों के साकल्य को एकत्रित कर देता है और साकल्य को एकत्रित करके अपने अन्तर्हृदय रूपी यज्ञशाला में जब वो मानो हूत करता है, अपने को प्रकाशित बना लेता है। मेरे पुत्रो! वह मन और प्राण दोनों का साकल्य रूप में और विचार मध्य में देकर के बेटा! वो यौगिकता में पारायण हो जाता है।

राष्ट्राध्यक्ष के गुणावगुण

तो विचार विनिमय क्या, मैं विशेष विवेचना नहीं देने जा रहा हूँ यह सब कर्तव्य का पालन है जैसे राष्ट्रवेत्ता है। वो राष्ट्रवेत्ता प्रजा में जब भ्रमण करता है और प्रजा में अपने कर्तव्य का उपदेश देता है तो बेटा! राष्ट्र पवित्र बन जाता है। हमारे यहाँ राजा को वैदिक साहित्य में बेटा! अध्वर्यु कहा है। अध्वर्यु उसे कहते हैं जिस राजा के राष्ट्र में हिंसा नहीं होती। जो अहिंसक है, वही तो अध्वर्यु कहलाता है। हमारे यहाँ जिस भी काल में मुनिवरो! देखो, यज्ञशाला का निर्माण हुआ। परमपिता परमात्मा ने देखो, अध्वर्यु अमृतं ब्रह्मः जो अमृत की वृष्टि करने वाला जो चन्द्रमा है वो अध्वर्यु कहलाता है जो अमृत देता है, प्रकाश देता है। सूर्य जो मानो देखो, ऊर्ज्वा देता है। अनुपम जीवन देता है, प्रकाश देता है वही तो बेटा! अध्वर्यु कहलाता है। इसी प्रकार जो अध्वर्यु होता है उस राजा को अध्वर्यु कहते हैं। हे राजन्! तेरे राष्ट्र में हिंसा नहीं होनी चाहिए। यदि तेरे राष्ट्र में हिंसा होती है। तो तेरी जो यज्ञशाला है जैसे परमपिता परमात्मा की यह संसार रूपी यज्ञशाला है। या मानो शरीर रूपी यज्ञशाला है। यह भ्रष्ट हो जायेगी और तेरा जो आध्यात्मिक और भौतिक याग है वह भी नष्ट हो जायेगा। तो इस प्रकार बेटा! देखो, ऋषिवर जब यह उपदेश देते, तो भारद्वाज मुनि ने कहा ये मानो देखो, विज्ञान का जब सदुपयोग होता है। विज्ञान में विद्यमान होकर के लोक लोकान्तरों की यात्रा की जाती है। परन्तु यन्त्रों पर वे विद्यमान होकर के अभ्योदय होता है परन्तु देखो, वह विज्ञान का दुरुपयोग नहीं करना।

भौतिक विज्ञान के दुरुपयोग का परिणाम

और जिस काल में मुनिवरो! देखो, राष्ट्र और समाज में विज्ञान का दुरुपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है। मानो जैसे हमारे यहाँ नाना प्रकार की चित्रावलियों का अभी-अभी हमने वर्णन किया है। इन चित्रावलियों में महापुरुषों के चित्र न आना, उनके क्रियाकलाप न आना मानो महापुरुषों के कर्तव्यवाद को दृष्टिपात न करना, उसमें बेटा! देखो, मेरी पुत्रियों के जब नग्न चित्र आने प्रारम्भ हो जाते हैं तो उन चित्रावलियों को मेरे प्यारे! उन चित्रों को दृष्टिपात करने वाले छात्र, छात्रिकाएँ सब दृष्टिपात करते हैं। मानो देखो, उनमें वृत्तिका आने से उनकी चंचलता के कारण मेरे पुत्रो! देखो, छात्र और छात्रिकाओं का ब्रह्मचर्य दूषित हो जाता है। और जब ब्रह्मचर्य दूषित हो जाता हे तो आलस्य और प्रमाद बलवती हो जाता है। और जब आलस्य और प्रमाद बलवती हो जाता है तो मुनिवरो! देखो, वो राष्ट्र से अपने अधिकारों की पुकार करने लगते हैं। जो सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के था। जब से यह राष्ट्र व्यवस्था का निर्माण हुआ है, कोई भी मानव बेटा! किसी के अधिकार की पुकार कोई भी

पूर्ण नहीं कर सका। जब मुनिवरो! देखो, अधिकार की पुकार पूर्ण नहीं होती है, और कर्तव्यवाद नहीं रहता है तो उस समय बेटा! देखो, राजा के राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्तियाँ आ जाती है। और क्रान्ति का परिणाम ये होता है कि समाज मुनिवरो! देखो, उनका जीवन स्थायी नहीं रह पाता है। विचार आता रहता है मैंने बहुत पुरातन काल की वार्ता तुम्हें प्रकट की थी। राजा राम के राष्ट्र में जब मुनिवरो! देखो, रक्त भरी क्रान्ति आयी तो वह पुकार के ऊपर आयी। जब भी मुनिवरो! देखो, किसी भी काल में राजा के राष्ट्र में जब जीवन अस्त-व्यस्त होता है। तो विज्ञान के दुरुपयोग से होता है इसलिये विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। विज्ञान के दुरुपयोग से ही मैंने देखो, नाना प्रकार के तुम्हें यन्त्रों में दृष्टिपात कराया था।

यन्त्र द्वारा 72 लोकों का भ्रमण

भारद्वाज मुनि ने कहा जब महर्षि तत्व मुनि महाराज के द्वारा अध्ययन करता था। तो अध्ययन करते हुए मुझे एक समय नाना लोक लोकान्तरों में जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा। तो भारद्वाज मुनि ने कहा देखो, महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के एक श्वेती नामक एक ब्रह्मचारी थे। दोनों विद्यालय से एक यन्त्र में उड़ान उड़ते जो अन्तरिक्षयान था। उस यान में उड़ते हुए सबसे प्रथम चन्द्रमा में पहुँचे। चन्द्रमा के पश्चात बुद्ध में, बुद्ध के पश्चात शुक्र में, शुक्र के पश्चात मंगल में पहुँचे और मंगल से जब उड़ान उड़ी तो म्रेचकेतु मण्डल में प्रवेश किया। म्रेचकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो पुष्य नक्षत्र में प्रवेश किया और वहाँ से उड़ान उड़कर के देखो, व्रेण और अस्वाति मण्डलों में प्रवेश किया। एक मानो देखो, मौनवृत्तिका एक मण्डल था उसमें प्रवेश किया मानो देखो, स्वाति अमृताम् में प्रवेश करके अरुन्धती और वशिष्ठ मण्डल में जब पहुँचे तो वहाँ हमने सर्वाकृति दृष्टिपात की। तो मेरे पुत्रो! विचार ये ऋषि कहता है, कि हमने 72 लोकों का भ्रमण करके और वो यान देखो, गुरु आश्रम में आ गया, आचार्य के आश्रम में प्रवेश हो गया। तो विचार विनिमय यह कि देखो, मुनिवरो! ऋषि कहते हैं कि विज्ञान का दुरुपयोग होना ही अकर्तव्यवाद बन जाता है। और विज्ञान का सदुपयोग होते ही कर्तव्यवाद आ जाता है। मेरे प्यारे! विज्ञान सदुपयोग में महापुरुषों का क्रियाकलाप बेटा! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया।

महर्षि शिकामकेतु उद्यालक की विज्ञानशाला

उद्यालक गोत्र के शिकामकेतु उद्यालक मुनि थे। उद्यालक मुनि के यहाँ बेटा! पति-पत्नी अपनी विज्ञानशाला में, यज्ञशाला में प्रथम याग करते, उनकी तरंगों के ऊपर अन्वेषण करते रहते। अन्वेषण करते-करते उन्होंने मानो देखो, एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया था, जिसे देखो, बेटा! जो स्वाहा कहता यजमान या जो भी उच्चारण कर रहा है, उसके चित्र बनकर के वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होकर के द्यौ में प्रवेश हो जाते है। शिकामकेतु उद्यालक गोत्र में देखो, बड़े विचित्र ऋषि थे उन्होंने बेटा बड़ा महान तप किया। 50 वर्ष के तप करने के पश्चात जब यन्त्रों में प्रवेश किया तो 105 वर्ष की आयु होते ही उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया जिसमें बेटा! अपने पूर्वजों का दर्शन करने लगे। मेरे प्यारे! देखो, वह पिता, महापिता, पडपिता जो अन्तरिक्ष में बेटा! शब्द और शब्दों के साथ में चित्र, चित्रों के साथ में उनका क्रियाकलाप उन्हें दृष्टिपात आता रहता। तो मेरे पुत्रो! देखो, विज्ञान अपनी आभा में बड़ा विचित्र रहा है।

अधिकारों की पूर्ति असम्भव

परन्तु विचार यह कि विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए। विज्ञान में मानो देखो, जब दुरुपयोग होता है, तो उस समय मानव अपनी पुकार पुकारने लगता है। और वह पुकार उसका अधिकारं ब्रह्मे कर्तव्य तो कर नहीं पाता और अधिकार को चाहता है तो अधिकार तो कोई पूर्ण नहीं कर सका है। जब से सृष्टि का प्रारम्भ हुआ है तो मेरे पुत्रो! देखो, विचार-विनिमय यह कि मानव को तपस्या में परिणत होना चाहिए और राष्ट्र को चाहिए कि

वो राजा ब्रह्मवेत्ता हो। और मानो देखो, अध्वर्यु हो जिससे उसके राष्ट्र में हिंसा न हो। जब तक मुनिवरो! देखो, राष्ट्र ब्रह्मवेत्ता या परमपिता परमात्मा की प्रतिभाशाली नहीं बन पाता और राष्ट्रवाद में मानववाद तब ही आता है जबकि अपनी आत्म चेतना को जागरूक करता है। और आत्म चेतना जागरूक तब होती है जब मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में धर्म को विचारता है। और धर्मज्ञं ब्रह्माः देखो, नौदामय मन्त्रों को उद्गीत गाता हुआ बेटा! अपने में महानता का प्रतिपादन करता रहता है।

तो आओ मेरे पुत्रो! देखो, विचार-विनिमय क्या? मुझे बहुत-सा काल स्मरण आता रहता है। भारद्वाज मुनि महाराज ने जब बेटा! इस प्रकार की विचारधारा प्रकट की तो ऋषियों ने उसको स्वीकारा और यह कहा कि जितना भी कर्तव्यवाद है वो मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित रहता है। प्रत्येक मानव उसी से विचार करता रहता है। उसी विचार के साथ में वो क्रिया कलाप करता है। मेरे पुत्रो! एक मानव योगी बनना चाहता है। वह मन, प्राण और विचार को जब तक एक सूत्र में लाकर के अपने में मन्थन नहीं करेगा तब तक मुनिवरो! देखो, वो योगेश्वर नहीं बन पाता। इसी प्रकार बेटा! देखो, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है। या समाज में मानवता को लाना है तो उसे ब्रह्मवादी बनकर के अनुशासित होकर के मुनिवरो! देखो, राष्ट्र को उन्नत बनाना होगा। मुझे बहुत-सा काल बेटा! देखो, राजा राम के राष्ट्र में बड़ी विचित्र क्रान्ति आयी। द्वापर के काल में भी इस प्रकार की क्रान्तियाँ आती रही हैं।

भौतिक विज्ञान की आवश्यकता

परन्तु देखो, विचार यह कि विज्ञान अपनी आभा में रहना चाहिए। मैं विज्ञान का द्रोही नहीं हूँ, मैं उसका विरोधी नहीं हूँ, विचार यह दे रहा हूँ कि विज्ञान होना चाहिए। और देखो, हमारे ऋषि मुनियों का तो इतना विशाल विज्ञान रहा है, कि मुनिवरो! देखो, प्रत्येक वस्तु को वैज्ञानिक रूप से उसका मन्थन करना और मन्थन करके उसको क्रियात्मकता में लाकर के उसको निर्धारित उन्होंने किया है। मुझे बहुत सी विचार धाराएँ जब महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ यजमान याग कर रहा है तो यन्त्र विद्यमान है, स्वाहा कह रहा है तो उसके चित्र देखो, मानो दृष्टिपात आ रहे हैं। वे द्यौ-लोक में दृष्टिपात होते रहते हैं। तो मेरे पुत्रो! देखो, विचार-विनिमय क्या, आज मैं कोई व्याख्यान देने नहीं आया हूँ केवल परिचय ये कि हम मुनिवरो! देखो, अपने राष्ट्र, समाज और मानवता को पवित्र बना सकते हैं। तो विज्ञान का सदुपयोग होने से हम समाज और देखो, राष्ट्र को उन्नत कर सकते हैं। तो मेरे पुत्रो! देखो, विज्ञान का सदुपयोग मानवता, छात्र और छात्राओं का सुरक्षित रहना उनके जीवन में ब्रह्मवर्चोसि देखो, ब्रह्मचरिष्यामि बनना ये मुनिवरो! देखो, उनका कर्तव्य माना गया है। आज का विचार-विनिमय क्या कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम मानो देखो, विज्ञान में पारायण हो जाये।

महर्षि भारद्वाज को भौतिक विज्ञान की प्रेरणा का प्रसंग

तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय जब ये महर्षि भारद्वाज जी ने वर्णन किया तो बेटा! ऋषि ने अमृताम् बेटा! देखो, वैशम्पायन और साकल्य मुनि ने यह कहा कि प्रभु! हम ये जानना और चाहते हैं क्योंकि आपका जो गोत्र है वो भारद्वाज कहलाया गया है और भारद्वाज गोत्र में बहुत से वंशलज हुए हैं और भारद्वाज गोत्र का जो निकास हुआ है वो हरितत् गोत्रां से हुआ है। हरितत् गोत्रों का निकास मानो अंगिरस से हुआ है। और अंगिरस गोत्रों का जो निकास है वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है। हे प्रभु! हम ये जानना और चाहते हैं। इनमें कोई भी ऐसा विज्ञानवेत्ता नहीं हुआ मानो देखो, जिस विज्ञान का तुमने वर्णन किया है, और हमें दृष्टिपात कराया है, देखो, सब ब्रह्मवेत्ता हुए है, ब्रह्मनिष्ठ हुए हैं, ब्रह्मवर्चोसि हुए हैं, परन्तु ये आपको प्रेरणा कहाँ से प्राप्त

हुई? तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि इसकी प्रेरणा देने वाले मेरे माता और पिता है। मेरे पिता का नाम रेंगणी भारद्वाज था और माता का नाम शकुन्तका था दोनों ने मुझे धिक्कारा, एक मिथ्या वाक् उच्चारण करने पर। उसी समय से मैंने परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन किया और मैंने महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहाँ वेदामृत का जब अध्ययन करने लगा तो मानो देखो, परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन किया और परमाणु विद्या में जानते जानते यह संसार एक परमाणु विद्या से घिरा हुआ है। विचित्रता में रमण करता रहता है। एक-एक तरंग मानो देखो, शब्दों में तरंगों के ऊपर अध्ययन करना हमारा कर्तव्य रहा है। आध्यात्मिकवाद में भी तरंगों को जानता हुआ आत्म चेतना में प्रवेश करता हुआ, देखो, आत्म तत्त्व और परमात्मा के राष्ट्र में वो भ्रमण करता रहता है।

तो ये है मुनिवरो! आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज का वाक् समाप्त, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या, कि जितना भी ये जड़ जगत है और चेतन्य जगत है मानो देखो, दोनों प्रकार का जगत उस परमपिता परमात्मा से घिरा हुआ है। परमात्मा की आभा में सदैव निहित रहता है। इसीलिये हमें परमपिता परमात्मा की आराधना करनी चाहिए जो हमारे अन्तर्हृदय में विद्यमान है। ये है बेटा! आज का वाक् समय मिलेगा शेष चर्चाएँ कल प्रकट। ओ३म् देवं रथाः आभ्यां रेवं गतं मां रेधिः। दिनांक 12.2.89, ओ३म् यंचनः रथं आभ्यां दधिः। अच्छा भगवन! आज्ञा। स्थान कुरुक्षेत्र

७ संस्कारों की प्रभा १६ ०२ १९८९८

जीते रहो! देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद वाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं। और ये जो ब्रह्माण्ड है यह उस अनन्तमयी महिमा का प्रतिपादन कर रही है। प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आता रहता है कि ये जो ब्रह्माण्ड है ये उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा मानी गयी है। और यह दो रूप में विद्यमान है। एक चेतनामय है और द्वितीय जड़वत् में माना गया है। यदि हम जड़वत् के ऊपर अनुसन्धान और विचार विनिमय करते है तो वहाँ भी एक अनन्तता दृष्टिपात आने लगती है और मानो चिन्तन और मनन करते हुए ऐसे आभास समुद्र में प्रवेश कर जाते हैं जहाँ मानव मानो उसी में रत हो जाता है। और जब वह चेतना के ऊपर अन्वेषण करता है, अथवा उसकी भी गम्भीर मुद्रा में जब मुद्रित हो जाता है, तो वो चेतना के ऐसे क्षेत्र में चला जाता है, जहाँ उसी में मानो वो रत हो जाता है।

आत्मतत्त्व

परन्तु आज का हमारा वेद मन्त्र यही उद्गीत गा रहा है कि प्रत्येक मानव को आत्म चिन्तन करना चाहिए। और जड़वत् जो परमात्मा का जो ब्रह्माण्ड है, उसके ऊपर विचार और उसको क्रियात्मकता में लाने का प्रयास करना चाहिए। जिससे मानव के हृदय में आत्मतत्व की जो प्रतिभा है, उस में जागरूकता आ जाये और यह जो जड़वत् जगत है इससे उपरामता को प्राप्त हो जाये और इस संसार की जो कृतिका है जो मानव की मनस्तव ध्रुवा में ले जाने वाली जो प्रवृत्तियाँ है उन प्रवृत्तियों के ऊपर वो अनुशासन करता हुआ और "मनस्तव विचारणां बृहि कृतो" मानो वह प्राण और चिन्तन, आत्मतत्त्व को जानने के लिये तत्पर हो जाये, ऐसा मानव को जानने का प्रयास करना चाहिए।

संस्कार

बहुत पुरातन काल हुआ एक समय बेटा! वैदिक ऋषियों के मध्य में एक वेद मन्त्र स्मरण आया था किसी काल में और वह वेद मन्त्र यह कह रहा था "सम्भवः प्रभा वृत्रे देवाः मानवसुति श्वंजनं बृहे कृपाः अस्वति देवाः" तो वेद का मन्त्र मानव के जीवन की एक प्रतिभा का प्रतीक बना हुआ है। और यह उद्गीत गाने लगा कि मानव के जीवन में, ऐसी प्रतिभा, ऐसे संस्कार ऐसी मानो उसकी अपनी मनत्तपप्रहे उसका मन्थन ऐसा होना चाहिए। जिस मन्थन के द्वारा उस मानव के जीवन की प्रतिभा एक ऊर्ध्वा में गतिवान होती रहे।

नारी शिक्षा

मेरे पुत्रो! मुझे वो काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में बेटा! स्वानकेतु मुनि महाराज के यहाँ नाना ब्रह्मचारी और नाना ब्रह्मचारिणी अध्ययन करती रहीं। मानो मुझे वो भी काल स्मरण है जब महाराजा अश्वपति के यहाँ बेटा! मानवीयता की आभा में कन्याओं का एक व्रत देखो, देवियों का एक सम्भू अव्रतम वाचकेतु ऋषि के यहाँ एक सम्मेलन हुआ और उसमें ऋषि-मुनियों का मानो एक नृत होने लगा। और उन ऋषि मुनियों ने ये कहा कि मानव का जीवन किस आधारित तत्व में रहना चाहिए? तो मुनिवरो! देखो, इसमें मुक्रुत ऋषि महाराज ने एक वाक् कहा कि इस सम्बन्ध में महर्षि भृगु जी अच्छी प्रकार जानते हैं उनका बड़ा अध्ययन है। तो मानो देखो, महर्षि मुक्रुत और व्रेतकेतु और सम्भूति ब्रा वासम और वैशम्पायन के पुत्र त्रिकात ऋषि महाराज बेटा! वे भ्रमण करते हुए महर्षि भृगु आश्रम में प्रवेश हुए और महर्षि भृगु जी ने उन्हें बड़ा आश्वासन

दिया, आसन दिया। वे विराजमान हो गये। उन्होंने कहा कहो भगवन! तुम्हारा आगमन कैसे हुआ है?

मानव जीवन के आधार भूत तत्त्व

उन्होंने कहा प्रभु! इस वेद मन्त्र की आभा में रत हो रहें है। और मानव के जीवन के लिए ये बहुत-सी वृत्तियाँ हैं, जिनको जानने के लिये हमारी बड़ी प्रबल इच्छा रहती है, हम उसे जानना चाहते हैं। तो ऋषि भृगु जी ने कहा, क्या है? उन्होंने कहा प्रभु! आपने मानव के जीवन में जो अध्ययन किया है, आप उसे उच्चारण कीजिए। तो महर्षि भृगु जी ने कहा कि भई मैंने तो इस मानव के जीवन को तीन भागों में विभक्त किया है। जिसमें एक सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। ये तीन प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं अथवा ये प्रकृति के तीनों स्वरूप माने गये हैं। जैसे मानो देखो, सतोगुण है उसमें पालना होने का नृत हो रहा है। और द्वितीय रजोगुण है, जिसमें मानव अनुशासन की प्रवृत्तियों में प्रवृत्त हो जाता है। और तृतीय तमोगुण है जहाँ उत्पत्ति का मूल विद्यमान रहता है। तो मैंने मानो इसके ऊपर बहुत गम्भीरता से अध्ययन किया। और अध्ययन करते हुए मानो ये संसार भी तीन प्रकार की आभा में निहित होता रहा है। मानो देखो, कहीं पालना है, कहीं रजोगुण की प्रवृत्तियाँ हैं शासन। और तमोगुण में उत्पत्ति के मूल में रजतव विद्यमान रहता है।

विष्णु स्वरूपा माता

तो मेरे पुत्रो! देखो, जब महर्षि ने यह वर्णन किया, उन्होंने कहा प्रभु! वेद मन्त्र क्या कहता है इस सम्बन्ध में तो महर्षि भृगु जी ने यह कहा कि देखो, यहाँ वेद मन्त्र ये कहता है कि ममत्वां ब्रह्मणः मानो देखो, विष्णु के जो स्वरूप माने गये हैं, वो माता के तव में माने गये हैं। क्योंकि माता का नाम विष्णु कहा गया है। जो विष्णु बनकर के माता अपने गृह में, पालना में प्रवेश अप्रहा वह पालना करने लगती है तो मानो देखो, उसका विष्णु स्वरूप बन जाता है। वह माता विष्णु है। वास्तव में परमपिता परमात्मा का नामोकरण ही विष्णु माना गया है। वह पालना करने वाला है। मेरे पुत्रो! देखो, उस भगवान विष्णु की प्रतिभा जो पालना में रत रहने वाली है। ये वाक् मुनिवरो! देखो, परम्परागतों से ऋषि मुनियों में एक प्रतिष्ठा वाला शब्द है कि हम पालना में प्रवेश हो जायें। पालना करना हमारा कर्तव्य है। तो मानो देखो, जो आत्म चिन्तन है, वह जब करने लगता है तो मुनिवरो! देखो, मानव की प्रवृत्तियों का, मानव की आभाओं का देखो, पालना में परिवर्तित हो जाता है। और वह जब आत्म चिन्तन में लग जाता है, आत्मा को विष्णु स्वीकार करता है, तो मानो देखो, उसके बहुत से जो रुग्ण हैं। बहुत से उसके जो आन्तरिक जगत से बाह्य जगत में इतना विस्तृत हो गया है, इतनी तृष्णा बलवती हो जाती है, तो मानो देखो, नष्ट हो जाती है। जब मानव आत्म चिन्तन करता है तो तृष्णाएँ समाप्त हो जाती हैं। और उसकी शारीरिक जो मौलिकता है वह अपनी सीमा में बद्ध हो जाती है।

विष्णु, शिव व ब्रह्मा की विवेचना

तो मेरे प्यारे! ऋषि ने इस वाक् का जब वर्णन किया तो महर्षि भृगु जी ने अपना, प्रमणं मानो देखो सतोगुण में उनमें विष्णु है और रजोगुण में शिव माना गया है और मुनिवरो! देखो, तमोगुण में ब्रह्मा हैं। तो ये तीनों जो हमारे शरीरों में नृत हो रहें हैं, मानो देखो, ये तीनों गुणों का जो अवधान हो रहा है, इसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना है। इसी को लेकर के मानो मेरे प्यारे! जब माता को हम विष्णु कहते हैं तो माता यहाँ तक पालना में प्रवेश हो जाती है कि अपने गर्भ में जो एक बिन्दु है, उस बिन्दु में शिशु है और वह शिशु पनप रहा है। परन्तु देखो, शिशु आत्मतत्ववेत्ता, जो माता होती है वो अपने गर्भ की आत्मा से वार्ता, उस शिशु से वार्ता प्रकट करने लगती है मानो उसे संस्कार देना प्रारम्भ कर देती है और माता कहती है आत्मं ब्रह्मणाः व्रेते। जैसे बेटा! देखो, माता मल्दालसा के जीवन में मानो देखो, उनकी जीवन गाथाओं में इस प्रकार का वर्णन

आता रहा है।

मातृशक्ति व माता मल्दालसा

जब माता मल्दालसा ने अपने आचार्य कुल में वेद का अध्ययन करते हुए मन्त्रों और देखो, दर्शनों की आभा में प्रवेश होकर के जब उन्होंने ये अध्ययन किया कि माता वो कहलाती है जो अपने गर्भ से ऐसे संतान और ऐसे पुत्र को जन्म देने वाली हो मानो देखो, जो वे ब्रह्मवेत्ता बनकर के, परमपिता परमात्मा का दिया हुआ जो अनुपम ज्ञान है, वेद की जो प्रतिभा है, उसका वो प्रसार करने वाला हो। देखो, अपने उद्धृत रूप में प्रवेश करने वाला हो, ऐसा मानो माता यह विचारती रहती है। मेरे पुत्रो! इस प्रकार की विद्या का जब अध्ययन किया जाता है तो माता वास्तव में इस प्रकार की आभा में परिणत हो जाती है। तो माता मल्दालसा अपने में यह विचारती रहती थी कि या तो मैं गृह में नही जाना चाहती हूँ और गृह में यदि मेरा प्रवेश होगा तो मैं ऐसे सन्तान को जन्म देना चाहती हूँ जिससे वो ब्रह्मवेत्ता बनकर के और ब्रह्म के ऊपर विचार-विनिमय करके, मानो देखो विवेकी बनकर के और वह परमपिता परमात्मा का जो अनन्तमयी, जो मोक्षमयी पगडण्डी है उसे वो ग्रहण करने वाला है।

संस्कारित शिशु

तो माता मल्दालसा मानो देखो वह यह विचारती रहती है। कुछ समय के पश्चात उनका गृह में ब्रह्मणं ब्रभे कृतं लोकाम् जब उनका गृह में प्रवेश हुआ, गृह में प्रवेश होते ही मेरे प्यारे! देखो, जब वह अप्रतम् आत्मा उनके गर्भ में प्रवेश हो गयी तो आत्मा से वो चर्चा करती रहती थी, मानो देखो, शान्तं ब्रह्मा अपनी सर्वत्र प्रवृत्तियों को एकाग्र करती हुयी वह अपने शिशु से वार्ता प्रकट करती रहती; हे शिशु! मेरे गर्भ में तेरा आगमन हुआ है तू तो सदैव निसम्भं ब्रह्रे अस्सुतः अव्यय है, अभ्योदय होने वाला है। मानो तू निरंजन है, अखण्ड है, सम्भूति ब्रह्मणा लोकाः है। मानो देखो, यह वार्ता प्रकट करती रहती है, हे आत्मा! तू अजर है, अमर, अभय और नित्य है। तेरा किसी भी काल में विनाश नहीं होता है। हे आत्मा मेरे गर्भ में तेरा प्रवेश हुआ है, मैं नहीं जानती कि तू बनना क्या चाहती है? मेरे प्यारे! देखो, आत्मा जब इस संसार में आयी तो देखो, उसे संस्कार देती रही, विचार देती रही। संस्कारों का अभिप्राय है कि वह विचार देती रही। और विचार मानो देखो, वेद मन्त्रों की प्रतिभा कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, पाँच वर्ष का ब्रह्मचारी, पाँच वर्ष का माता मल्दालसा का पुत्र बेटा! देखो, वह एक समय माता से बोला कि हे मातेश्वरी! अब मुझे आज्ञा दीजिए। ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मणे व्रताः मैंने ब्रह्म का उपदेश तो पान कर लिया है। अब मैं मानो देखो, वह मनन और चिन्तन करने जा रहा हूँ। मुझे भयङ्कर वन के लिये आज्ञा दीजिए। मेरे प्यारे! देखो, माता बड़ी प्रसन्न हुईं और माता ने कहा कि मेरा जो उद्देश्य था मेरा जो अतीत में मैंने एक सङ्कल्प किया था, कि मेरे गर्भ से ऐसे बालक का जन्म हो, मेरे पुत्रो! सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण ये तीनों गुणों की मैंने शिक्षा प्रदान की हैं। मेरे प्यारे! वह बालक ब्रह्मचरिष्यामि वह मुनिवरो! देखो, भयङ्कर वन को चला गया और भयङ्कर वन में जाकर के बेटा! छः माह के पश्चात मेरे पुत्रो! देखो, चिन्तन करने के पश्चात, वही बाल्य माता के गृह में पुनः प्रवेश हुआ।

माता मल्दालसा का अध्यात्मवाद

और माता ने कहा, हे बाल्य! हे ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्म की जिज्ञासा वाले हे बालक! कैसे मेरे द्वार पर पुनः तुम्हारा प्रवेश हुआ है? उसने कहा हे माता! मैं तुमसे कुछ जानना चाहता हूँ। उन्होंने कहा तुम उद्गीत गाओ, क्या जानना चाहते हो? उन्होंने कहा हे माता! यह ब्रह्म क्या है? जो तुमने मुझे उपदेश दिया है और यह कहा है कि ''ब्रह्मणं ब्रह्माः कृतं लोकाम्'' उन्होंने कहा ये जो ब्रह्म है, ब्रह्म उसे कहते हैं, जो संसार का अधिपति है, इस

संसार को रचाने वाला है। एक-एक परमाणुवाद मानो देखो, इसमें जो गति आ रही है, यह जो संसार गतिवान हो रहा है ये ब्रह्म की प्रतिभा से गतिवान हो रहा है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा चलो, यह मैंने स्वीकार कर लिया। परन्तु देखो, हम जानना क्या चाहते हैं? इसके सम्बन्ध में, माता ने कहा कि तुम अपने को जानना चाहते हो। और अपने को जानकर के मानो देखो, जहाँ तुम्हें जाना है वहाँ के लिये तुम सदैव अपने में अपनेपन का चिन्तन कर रहे हो। उन्होंने कहा धन्यं ब्रह्मे उन्होंने कहा हे मातेश्वरी! हम यह और जानना चाहते हैं कि यह ये जो जगत है यह किससे व्याप्त हो रहा है? उन्होंने कहा ये ब्रह्म से व्याप्त हो रहा है। मानो देखो, यह जो ब्रह्म है ब्रह्मणां देखो, ब्रह्म से ही ये व्याप्त है। जहाँ भी तुम दृष्टिपात करोगे वहीं तुम्हें यह जगत् उस ब्रह्म से व्याप्त होता हुआ दृष्टिपात आयेगा। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे माता! मैं यह और जानना चाहता हूँ कि यह जो लोक लोकान्तरों की जो माला बनी हुई है, यह जो लोक लोकान्तर हैं ये किससे पिरोये हुए हैं? उन्होंने कहा कि जो लोक लोकान्तर हमें दृष्टिपात आ रहे यह माला है और माला मानो देखो, माला में एक सूत्र होता है और उस सूत्र में नाना मनके पिरोए हुए होते हैं। इसी प्रकार ये जो ब्रह्माण्ड है ये जो लोक लोकन्तरवाद है। यह मानो देखो, ब्रह्म सूत्र में पिरोया हुआ है। ये ब्रह्मसूत्र में पिरोकर के एक पिण्ड के रूप में दृष्टिपात आ रहा है। जैसे, मानो देखो, हमारे गर्भ में तुम्हारा निर्माण हुआ, और नाना प्रकार के परमाणु एकत्रित होकर के, उनका एक पिण्ड बन गया है। और पिण्ड में देखो, एक अभिमानी आत्मा है जो अपने को 'अहं ब्रह्मास्मि' कहकर के ब्रह्म के समीप जाना चाहती है। हे बाल्य! ब्रह्मणां व्रहा ये जो ब्रह्माण्ड है, यह जो लोक लोकान्तरवाद है, एक सूत्र में पिरोया हुआ है। और लोक लोकन्तरवाद ही नहीं एक-एक परमाणु इसी में पिरोया हुआ है।

माता मल्दालसा का वेदज्ञान

मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मणः ब्रहा कृतं देवाः वेद के ऋषियों ने इस प्रकार का वर्णन किया है। माता मल्दालसा के वाक्यों को पान करने वाला ब्रह्मचारी बोला कि हे मातेश्वरी! तुम मुझे ब्रह्मचारी क्यों कहती हो? मैं नहीं जान पाता हूँ कि तुम ब्रह्मचारी मुझे उच्चारण किये जा रही हो? उन्होंने कहा हे ब्रह्मचरिष्यामि! तुझे ब्रह्मचारी इसलिये कह रही हूँ कि इसमें दो शब्द माने गये हैं। ब्रह्म है, और चरी है। यह जो चरी है, इसका नाम प्रकृति है और ब्रह्म परमपिता परमात्मा को कहा जाता है। मानो जो दोनो का मन्थन करने वाला है वह मन्थन कर रहा है। ब्रह्मचरिष्यामि, ब्रह्मचारी अप्रतम् जो प्रत्येक मानो आभा को अपने में दृष्टिपात करने वाला है और वह ब्रह्म अस्सुतम देखो, ब्रह्म और चरी दोनों का ही मन्थन करता है। मानो देखो, दोनों के गर्भ में एक मृत्यु देखो, नृत कर रही है। मृत्यु को जो दूरी करना चाहता है, वो ब्रह्मचारी कहलाता है। इसीलिये तू ब्रह्मचारी है। क्योंकि तू अपने में महान कहलायेगा। मेरे पुत्रो! जब माता मल्दालसा ने यह कहा तो ब्रह्मचारी ने कहा हे माता! यह भी मैंने स्वीकार कर लिया। यह आपने जो मुझे उत्तर दिया, परन्तु ये जानना चाहता हूँ ब्रह्मचारी कौन है?

ब्रह्मचारी के गुण

पुनः यह प्रश्न करने लगा ब्रह्मचारी, कि ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा हे बाल्य! जो साधक होता है और साधना में प्रवेश करता है, मानो देखो, जो प्रत्येक श्वास "मानं ब्रहे कृतं लोकाः" प्रत्येक श्वास को मानो देखो, तरंग को ब्रह्मसूत्र में जो पिरोने वाला है, वो ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे माता! यह भी मैंने जान लिया। परन्तु मेरा यह प्रश्न है कि ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा हे बालक! ब्रह्मचारी वो है जो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करना चाहता है। जो प्रकाश की पगडण्डी में प्रवेश कर जाता है और अन्धकार की पगडण्डी से दूरी हो जाता है। क्योंकि दो प्रकार के मार्ग हमारे यहाँ माने गये हैं। एक मानो इस संसार का मार्ग है और एक चेतना का, ब्रह्म का, प्रकाश का मार्ग है। जिसे ज्ञानवान ग्रहण करते हैं। हे ब्रह्मचारी! जो

ज्ञानवान् बनकर के अन्धकार को दूरी करने वाला है वही ब्रह्मचारी कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी ने स्वीकार कर लिया उन्होंने कहा माता! यह भी मैंने स्वीकार कर लिया परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ, ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा हे पुत्र! ब्रह्मचारी वह कहलाता है, जो इस संसार को विजय कर लेता है और संसार को वो विजय करता है, जो मन को अपने में धारण करता हुआ प्राण में प्रवेश कर देता है और प्राण प्रतिष्ठा विचारों में प्रवेश हो जाती हैं देखो, मन, प्राण और विचार जब ये तीनों एक सूत्र के मनके बन जाते हैं, तो वह ब्रह्मचारी मृत्यु को विजय कर लेता है, और वही ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालसा का बाल्य छः वर्ष का ब्रह्मचारी यह प्रश्न कर रहा है।

पुनः उसने ये प्रश्न किया कि हे माता! ब्रह्मचारी कौन कहलाता है? ब्रह्मचारी तुम किसे उच्चारण करते हो? उन्होंने कहा ब्रह्मचारी वह कहलाता है, जो मानो देखो, ब्रह्मणां ब्रभा कृतं जो वसुन्धरा को जानता है। मानो देखो, वसुन्धरा क्या है? वसुन्धरा कहते हैं पृथ्वी को। वसुन्धरा कहते हैं, जो पालन करने वाली है। मानो देखो, वसुन्धरा मेरे प्यारे! देखो, जो पृथ्वी से लेकर के और मुनिवरो! देखो, माता और वह जो परमपिता परमात्मा जो वसुन्धरा है, इन तीनों को जानने वाले को बेटा! ब्रह्मचारी कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, माता के उपदेशों को, देखो, कृतिका को पान करके वो मौन हो गया। उसने कहा माता! ये मैंने जान लिया परन्तु मेरा एक प्रश्न और रह गया कि ब्रह्म किसे कहते है?

ब्रह्म की व्याख्या

उन्होंने कहा ब्रह्म परमपिता परमात्मा को कहते हैं। जिसमें ब्रह्माण्ड सर्वत्र पिरोया हुआ है। ब्रह्म, आत्मा को भी कहते हैं। जो देखो, आत्मा इस शरीरों में वास कर रहा है जिस आत्म चिन्तन में मानव अपनी प्रवृत्तियों को ऊर्ध्वा में गमन कराता रहता है। मानो देखो, यह जो ब्रह्म है, यह आत्मा है, यह आत्मा जिसके कारण ये मानव का शरीर चेतनित रहता है। और चेतना में गमन करता रहता है और ज्ञान को प्राप्त करता रहता है, वो ब्रह्म कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, एक परमपिता परमात्मा ब्रह्म है, जिसके कारण यह ब्रह्माण्ड देखो, गतिवान हो रहा है। नाना प्रकार के लोक लोकान्तर गतिवान हो रहे हैं। वह ब्रह्म कहलाता है तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या? जब माता ने यह वाक् प्रकट किया तो ब्रह्मचारी अपने में मौन हो गया। उसने कहा धन्य है मातेश्वरी! देखो, उस बालक का सौभाग्य है, जिस बालक की माता बुद्धिमती हो, बुद्धिमान हो और ज्ञानवान होकर के माता वसुन्धरा की भाँति जो हमारा पालन करने वाली हो।

आत्म तत्व

तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् ऋषि-मुनियों के विचाराधीन हुआ कि मानो देखो, मानव के बाल्यकाल से लेकर के माता के गर्भ से ले करके मानो देखो, मरण पर्यन्त, इस संसार में शरीरों को त्यागने से पूर्व आत्मतत्व का जो ध्यान जिसे हो जाता है वो मानो देखो, अपनी आभा में प्रवेश कर जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनियों ने एकत्रित होकर के इनके ऊपर बड़ा अनुसन्धान किया। और विचार-विनिमय किया है और उन्होंने कहा है कि माता जब यह स्वीकार करती है कि मैं अपने बाल्य को संस्कार देना चाहती हूँ, विचार देना चाहती हूँ, तो उसके पश्चात वो याग करती है। याग रचाती है, मानो देखो, वो याग के द्वारा शिक्षा प्रदान करती है। मानो देखो, बाह्य पदार्थों के आन्तरिक जगत में उन्हें ले जाती है और उसके विचार जो उनमें भावना है, उन्हें जब वो प्रवेश करा देती है, तो बेटा, माता अपने जीवन में धन्य हो जाती है।

तो आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विचार-विनिमय करने नहीं आया हूँ, विशेष विचार भी इस सम्बन्ध में देना नहीं चाहता हूँ। ये तो विचार बड़े गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, माता ने जब एक बाल्य

को ब्रह्मवेत्ता बनाया, द्वितीय को ब्रह्मवेत्ता बनाया। मेरे प्यारे! जब तीन पुत्र उनके ब्रह्मवेत्ता बन गये मानो वो ब्रह्म जिज्ञासा में प्रवेश हो गये और वह माता से प्रश्न करते रहते, और वे ओजस्वी और देखो, विवेकी बनकर के वो भयङ्कर वनों में प्रवेश हो गये तो मुनिवरो! देखो, जब उसके चतुर्थ सन्तान का जन्म होने वाला, होने हेतु प्रवेश हुआ तो राजा ने कहा हे देवी! यह तुम क्या कर रही हो? यह जो राज्य है यह कैसे चलेगा? राज्य को भी तो एक सन्तान को जन्म देना है। तो माता मल्दालसा ने कहा हे राजन! मैंने आपसे पूर्व कहा था कि मैं ''मानं ब्रह्माः कृत लोकां ब्रहे'' कि मैं इस गृह में प्रवेश करना नहीं चाहती हूँ। और करना चाहती हूँ तो मैं अपनी सन्तान को अपने मनो इच्छानुसार उसे जन्म देना चाहती हूँ। हे राजन्! तुम मुझे यह वाक् क्यों उच्चारण कर रहे हो? उन्होंने कहा हे देवी! इसलिये कर रहा हूँ कि यह राज्य भी तो चलना चाहिए। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा अच्छा मानो देखो, ''ब्रह्मणा प्रहा सम्भवाः'' अब राज्य के लिये राजसी सन्तान को जन्म देना है।

संस्कार विहीन बाल्य

मेरे प्यारे! देखो, उसको कोई संस्कार नहीं दिया। वह राजसी विचारों में, आहार और व्यवहारों में मानो देखो, पनपता रहा और पनपने का परिणाम यह हुआ कि ब्रह्मणे व्रतम् देखो, मेरे प्यारे! देखो, जब वह प्रबल हो गया, बारह वर्ष का ब्रह्मचारी हुआ; तो उस समय देखो, राजा और पुत्र दोनों को एक पंक्ति में विद्यमान करके मेरे प्यारे! उन्होंने कहा हे! प्रभु आओ, हे राजन्! अब मैं इस संसार को त्याग रही हूँ। मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालसा ने ब्रह्मणं ब्रह्मा कृतं लोकाम् राजा से कहा हे प्रभु! अब मेरा यहाँ से, संसार से गमन हो रहा है।

माता मल्दालसा का अप्रतिम वैराग्य

मेरे पुत्रो! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है। राजा ने कहा देवी! हमारा क्या बनेगा? उन्होंने कहा राजन! जब तुम्हारा मेरा संस्कार हुआ था, तो मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि जिस समय मेरी वाणी, मेरे कर्तव्य का उल्लन्घन हो जायेगा, उसी समय मैं इस शरीर को त्याग दूँगी। तो प्रभु! अब मेरा बारह वर्ष का यह ब्रह्मचारी ये राजा बनेगा। अब मैं अपने शरीर को त्याग रही हूँ। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा देवी! जैसी तुम्हारी इच्छा हो। उन्होंने बेटा! गायत्री छन्दों का पठन-पाठन किया और वेद मन्त्रों का पठन-पाठन करके अपने शरीर को त्याग दिया। मेरे प्यारे! देखो, त्यागते समय उन्होंने अपने बाल्य के कण्ठ में अपनी एक विचारधारा उन्होंने नृत करी। अब उन्होंने पत्रिकां प्रह्रा बेटा! उसके कण्ठ में स्थित कर दिया और स्थित करने के पश्चात उन्होंने शरीर को त्याग दिया। बेटा! वह अग्नि में भस्मां ब्रहे उनका अन्तिम संस्कार हो गया, प्रभु की गोद में चली गयी। परन्तु देखो, कुछ समय के पश्चात् राजा भी उसी विवध्रा में बेटा! वह भी समाप्त हो गये। और वह ब्रह्मचरी बेटा देखो, राजा बना। मानो देखो, जब राजा बना उनका नाम श्वेताश्रु था। बेटा! राजा श्वेताश्रु बनी देखो, मनुवंश में उनका जन्म हुआ था।

भगवान मनु की राष्ट्र प्रणाली

तो मेरे प्यारे! कुछ ऐसा स्मरण है कि वो राज करता रहा। परन्तु राष्ट्रीय प्रणाली, जब भगवान मनु ने बेटा! राष्ट्रीय प्रणाली का निर्माण किया था और राष्ट्र का निर्माण किया, तो बेटा! एक समय भगवान मनु से महती ऋषि ने यह कहा कि महाराज। तुम राष्ट्र का निर्माण क्यों कर रहे हो? उन्होंने कहा मैं इसलिये कर रहा हूँ क्योंकि प्रजा में, समाज में अकर्तव्यवाद आ गया है। कर्तव्यवाद लाने के लिये मैं राष्ट्र का निर्माण कर रहा हूँ। सबसे प्रथम राष्ट्र का जो निर्माण करने वाले थे वो भगवान् मनु थे। बेटा! मनु ने ऋषियों की सहायता से, राष्ट्र का निर्माण किया था। मेरे प्यारे! भगवान् मनु ने ये कहा था कि राजा के राष्ट्र में, राजा को अध्वर्यु कहते है और राजा के यहाँ एक मछली से लेकर के मानो प्रत्येक प्राणी की रक्षा होनी चाहिए। ये भगवान् मनु ने कहा

था। तो मेरे प्यारे! जब ऋषि ने यह कहा कि महाराज! तुम राष्ट्र का निर्माण इसलिये कर रहे हो कि प्रजा कर्तव्यवादी बन जाये। उन्होंने कहा हाँ प्रभु! तो भगवान् मनु ने बेटा! राष्ट्र का निर्माण किया। तो इसी प्रकार देखो, उन्होंने एक नियमावली बनाई कि राजा पचास वर्ष की आयु या मानो देखो, 75 वर्ष की और जो ज्यादा तपस्वी हो वह सौ वर्ष की आयु में मानो देखो, अपने सन्यास को प्राप्त कर ले। और वह अपने राज्य को त्याग कर के, तपस्या करने लगे।

मेरे प्यारे! भगवान मनु ने यह निर्माण यह अप्रतम् अपने राष्ट्र के निर्माण करते समय बेटा! यह नियमावली बनाई। वास्तव में यह कहा उन्होंने कहा कि ब्रह्मचर्य, गृह आश्रम और देखो, वह जो वानप्रस्थ विद्यालयों में शिक्षा देने वाले हों और मुनिवरो! देखो, उसके पश्चात वह भ्रमण इत्यादि करते सन्यास को प्राप्त हो जायें। यह राष्ट्रीय प्रणाली देखो, भगवान मनु ने इस प्रणाली का निर्माण किया और निर्माणवेत्ता ने बेटा! अन्त में ये कहा कि देखो, सन्यास लेते समय प्रभु को प्राप्त हो जाना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो इसी प्रणाली में जब वह राजा राज्य करता रहा तो बेटा! देखो, वहाँ ब्रह्मणे कृताः ऋषि मुनि आते कि महाराज! अब तुम्हारा काल समाप्त हो गया है। अब तुम अपने जेठे पुत्र को राज्य देकर के तपस्या करने चलो। उन्होंने कहा मैं इस राष्ट्र को नहीं त्यागूँगा। वह राष्ट्र की ममता में, ऐश्वर्य में परिणत हो गये। मेरे प्यारे! देखो, तीनों जो ब्रह्मचारी थे। माता मल्दालसा के उन्होंने श्रवण किया। मानो देखो, उनका नाम प्रवाहण, शिलक और दालभ्य ये तीन माता मल्दालसा के पुत्रे थे। देखो, बेटा! द्वितीय राष्ट्र से उन्होंने प्रार्थना की थी कि इस राष्ट्र पर आक्रमण करो और आक्रमण करके मानो देखो, इसको सन्यास दिलाओ।

तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने आक्रमण किया और आक्रमण करके और मुनिवरो! देखो, राजा को कारागार में स्थित कर दिया। जब वह कारागार में चला गया तो जिस समय कारागार में पहुँचा तो उसे स्मरण आया कि माता ने मुझे कुछ दिया था और माता ने मुझे एक लेखनी मेरे कण्ठ नियुक्त की तो उसमें एक शब्द था माता का तपा हुआ, कि यह संसार निस्सार है। बेटा! जब उन्होंने यह वाक् स्मरण कराया ब्रह्मणां ब्रहा जब उन्होंने लेखनी बद्ध किया माता के विचारों को जहाँ आश्वत किया, तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा ब्रह्मा कृतो अस्सुतम् राष्ट्रवेत्ता, राष्ट्र के कर्मचारियों से कहाँ मेरे पुत्रो! देखो, विचार यह कि वह कारागार से मुक्त करके और उन्होंने अपने जेठे पुत्र को राज्य दे दिया और वे तपस्या करने भयङ्कर वन में चले गये।

तप की अनिवार्यता

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या? जो माता अपने विचार दे देती है, वह विचार बड़े तपे हुए होते हैं और तपस्वी जो माता होती है वह अपने विचारो को देकर चली जाती है मेरे प्यारे! देखो, इसलिये तप करना चाहिए। तप ही मानव का जीवन है। और तप करने से ही मानव की प्रवृत्तियाँ ऊर्ध्वा में गमन करने लगती है। राष्ट्र भी बेटा! तपों से ऊँचा बनता है।

तो विचार-विनिमय क्या कि बेटा! हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और परमात्मा के इस अनूठे जगत के ऊपर मनन और चिन्तन करते हुए बेटा! इस सागर से पार हो जायें। हमारे इस उपदेश, मानो देखो, इन वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हमें परमपिता परमात्मा को प्राप्त होते हुए, परमात्मा की आराधना करते हुए, उसकी आभा में रत होते हुए इस सागर से पार हो जाना चाहिए। ये है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हमें परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए मानो देखो, हम अपनी सन्तति, अपने विचारों को, एक दूसरे में आदान-प्रदान करते हुए, परमात्मा के इस अमूल्य जगत को

विचार-विनिमय करते हुए, अपने में धारणा करते हुए और पिण्ड और ब्रह्माण्ड को जानते हुए बेटा! इस सागर से पार हो जाना चाहिए। ये है बेटा! आज का वाक् अब हमें समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मवसु आभ्यां लोकाः। ओ३म् यशोभिः वरुणां आपाः रथं मां रेवाः भद्राणि गताः। अच्छा भगवन्! आज्ञा। दिनांक 16.2.89, स्थान स्वाहेडी, बिजनौर।

८ राम राज्य का आधार १७ ०२ १९८९

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता की महिमा अथवा उसके गुणों का वर्णन किया जाता है, क्योंकि जितने भी वेद मन्त्र हैं, इन प्रत्येक वेद मन्त्रों में, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन होता रहता है। क्योंकि ये जो ब्रह्माण्ड है ये ज्ञान और विज्ञान से गुथा हुआ है। और वह परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान मानो उसका नितान्त है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं। परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि समय-समय पर ज्ञान और विज्ञान अपनी आभा में सदैव निहित रहा है और अपनी परिनिधि में मानो वो नृत होता रहा है।

विज्ञान की अनिवार्यता व आचार संहिता

परन्तु विचारवेत्ताओं ने, इस संसार में, जिस भी काल में ज्ञान और विज्ञान पनपा है, मानो विज्ञान तो मानव का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। और ज्ञान उसकी मौलिकता मानी गयी है। परन्तु विज्ञान जिस भी काल में पनपा है। वह बड़ा विचित्र बनकर के रहा है। और जब भी उस भौतिक विज्ञान का, दुरूप्रयोग हुआ है। उसी काल में मानव की मानवीयता का हृस हुआ है। जहाँ उसे ऊर्ध्वा में गमन और तरंगों में रमण करना था। परन्तु उन तरंगों का दुरूपयोग होने से, उसकी मानवीयता का हृस प्रारम्भ हुआ। परन्तु आज मैं बेटा! इस विज्ञान के क्षेत्र में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। केवल ये कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर प्रायः अपना विचार-विनिमय करते रहते हैं। क्योंकि हमारे यहाँ परम्परागतों से ही नाना विज्ञानवेत्ता अपनी आभा में रमण करते रहे हैं। और उनमें आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, अपने में उस विज्ञान को और भौतिकवाद को आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करते रहे हैं। क्योंकि आध्यात्मिकवाद अपनी आभा में सदैव नृत करता रहा है। और वह ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में अथवा उनके हृदयों में प्रायः गमन करता रहा है। और आत्म चेतना में वो मानो चेतनित होता हुआ मानवीयत्व में सदैव रमण करता रहा है।

वैदिक नारी आयुर्विज्ञान एवं धनुर्विज्ञान में पारायण

आज मैं बेटा! इस साहित्यिक विचार धाराओं में, प्रायः तुम्हें ले जाना चाहता हूँ क्योंकि समय-समय पर बड़ी विचित्रता रही है। बेटा! देखो, राम के काल में, त्रेता के काल में, हमारे यहाँ नाना प्रकार का विज्ञान मानवीयत्व में रहा है। जब मैं साहित्य के प्रश्नों को अपने समीप लाना चाहता हूँ तो प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय विज्ञान और मानवीयता कितनी महानता में गमन करती रही है। मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! धनुर्विद्या में प्रायः मेरी प्यारी माताओं का बड़ा सहयोग रहा है। मुझे स्मरण आता रहा है जब मानो देखो, हमारे यहाँ ब्रह्मणे ब्रहा सुतिः मानो वेद की एक-एक आख्यिका के ऊपर विचार-विनिमय किया गया और राष्ट्रवेत्ताओं ने भी इस सम्बन्ध में विचारा, प्रायः बेटा! देखो, अयोध्या में जितने भी राष्ट्रवेत्ता हुए, उन राष्ट्रवेत्ताओं की यह नियमावली बनी रही कि मेरी प्यारी माताएँ अथवा पुत्रियाँ उनके सन्तान जब उत्पन्न हुई तो मानो आयुर्वेद विद्यालयों में, आयुर्वेदाचार्यों के संरक्षण में, उसके पश्चात वो भयङ्कर वनों में और ऋषि, मुनियों के द्वारा जो आयुर्वेद और धनुर्विद्या नाना प्रकार की विद्याओं में पारायण रहीं। मुनिवरो! देखो, उनके आश्रम में देवियों ने अपने पुत्रों को बेटा! धनुर्विद्या का अभ्यास कराया।

राम का राष्ट्रवाद व तप

मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा है, कि मुनिवरो! देखो, अयोध्या में एक सभा हुई थी, और वह सभा बेटा! मुझे स्मरण आती रही। जब लंका को विजय करने के पश्चात राम ने बेटा! बारह वर्ष का तप किया था। राम ने यह कहा भरत जी से कि हे देवत्राहा मैं भयङ्कर वन में जा रहा हूँ, ऋषियों-मुनियों के आश्रमों में अपने जीवन को व्यतीत करूँगा, तपस्या करूँगा। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि भगवन! ऐसा क्यों? तो राम ने कहा कि मैंने लंका को विजय किया है, विजय क्या मैंने अपने कर्तव्य का पालन किया है। और उसमें मुझ में रजोगुण भी आया है तमोगुण भी आया है। और मानो उस में हृस भी हुआ हूँ और इसी काल में मेरा उल्लास भी ऊर्ध्वा में गमन करता रहा। क्योंकि दूसरों के रक्त को बहाना, ये कोई प्रियता नहीं है, ये मानवीयता का स्वरूप नहीं है।

राष्ट्रहित में भी हिंसा पापाचार

प्रायः ये कहा जा सकता है कि ये कर्तव्यवादी को नष्ट करना, ये राष्ट्रवेत्ताओं की एक चुनौती मानी गयी है। परन्तु यदि हम आध्यात्मिक दृष्टि में प्रवेश करते है तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात आता रहा है कि आध्यात्मिकवादी प्राणी देखो, उसमें वृत्तियों में गमन करता रहा है। तो मैं मानो उसमें पापाचार स्वीकार करता हूँ। और जब तक मैं आध्यात्मिक उत्थान मेरा नहीं होगा। और आध्यात्मिक प्रवेश, में मेरा गमन नहीं होता तो मेरा आत्मा बलिष्ठ नहीं होगा। तो मुनिवरो! देखो, भरत जी ने यह वाक् स्वीकार कर लिया और यह कहा कि प्रियवर! बहुत प्रियता है। महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के समीप पहुँचे। वशिष्ठ ने कहा कि हे राम! अब तुम राजस्थली को अपनाने का प्रयास करो। राम ने कहा कि प्रभु! नहीं मैं पूर्व तपस्या करूँगा। मुझे बारह वर्ष का अनुष्ठान करना है। जिससे मेरी मानसिक प्रवृत्ति पवित्र बन जाये। और आध्यात्मिकता में मेरा पुनः से जीवन बन जाये। ये राष्ट्र तो कहीं नहीं जाता। ये राष्ट्र तो सदैव बना रहेगा। क्योंकि मानव देखो, कहीं संसार के राष्ट्र में मग्न है, कहीं आध्यात्मिकवादी जो राष्ट्रवेत्ता होता वो अपने आध्यात्मिक राष्ट्र में मग्न रहता है।

राष्ट्र के विभिन्न प्रकार

वास्तव में देखो, हमारे यहाँ दो प्रकार के राष्ट्र माने गये हैं। एक राष्ट्र वो है जो स्वयं अपनी मानवीयतव में अधिपत्य करता है। जो प्रत्येक इन्द्रियों पर संयम करता हुआ आत्मतत्व को जानता है। आत्म चेतना में जो रत होता है वो सबसे महान एक राष्ट्र होता है। मानो देखो, उसके प्रत्येक इन्द्रियों पर संयम है। और संयमी बनकर के वह आध्यात्मिक उड़ान उड़ता है तो वो सबसे महान कहलाता है। परन्तु दूसरा यह कि संसार के राष्ट्र, संसार का जो राष्ट्र है जो एक मानव, मानव के ऊपर देखो, अधिपत्य लाता है। और वह समाज को कर्तव्यवाद में लाने का प्रयास करता है। तो मेरा सबसे प्रथम यही उद्देश्य रहा है कि मैं अपने आन्तरिक सम्राज्य को ऊँचा बनाऊँ और बाह्य जो साम्राज्य है उसे मैं तभी ऊँचा कर पाऊँगा जब कि मेरा आध्यात्मिकवाद ऊँचा होगा। मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि वशिष्ठ आश्चर्य से चकित होकर के बोले धन्य है हे राम! तुम तो महान हो। जाओ, तपस्या करने के लिए चले जाओ।

मानसिक प्रवृत्तियों का शोधन

मेरे पुत्रो! देखो, सब माताओं की आज्ञा पायी। माता ने कहा हे पुत्र! तुम राष्ट्र का पालन करो। उन्होंने कहा माता! मैंने मानो देखो, एक साम्राज्य विजय किया देखो, रावण के राष्ट्र को उसमें रजोगुण, तमोगुण मेरे हृदयों में कई समय आया है और मैं उस रजोगुण, तमोगुण की प्रवृत्तियों से ऊर्ध्वा गमन करना चाहता हूँ इससे मानो मेरा आध्यात्मिकवाद ऊर्ध्वा में गमन करे तो मेरे पुत्रो! देखो, राम माता की आज्ञा पाकर भयØर वनों में

चले गये।

मेरे पुत्रो! देखो, वह महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि के आश्रम के निकटतम एक आश्रम बनाकर के उन्होंने बेटा! बारह वर्ष का याग इत्यादि आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होकर के बेटा! उन्होंने अनुष्ठान किया। मुनिवरो! देखो, एक समय मध्यरात्रि का काल था देखो, महर्षि लोमश मुनि से बोले कि राम का तप चल रहा है। चलो, आज दृष्टिपात करेंगे। महर्षि लोमश मुनि बोले कि भगवन् देखो, राम अपनी गम्भीर मुद्रा में होंगे। उन्होंने कहा कि नहीं प्रभु! हम दृष्टिपात तो कर पायें। तो बेटा! देखो, राम अर्धरात्रि में प्रभु का चिन्तन कर रहे थे। और प्रभु से याचना कर रहे थे हे प्रभु! मेरे से जाने और अनजाने में जो भी पापाचार हुआ है, हे प्रभु! उसको मेरे अन्तर्हृदय से दूर कर दो। मेरे संस्कार न बने रहें। यदि तमोगुण के संस्कार या रजोगुण के संस्कार मेरे अन्तः करण में बने रहेंगे तो प्रभु! तमोगुणी, रजोगुणी योनियों में मुझे प्राप्त करना होगा! प्रभु! मैं उनसे उपराम होना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, ऐसा स्मरण है कि वे दोनों जब उनके द्वार पर पहुँचे तो बेटा! उनकी याचना, उनका मनन और चिन्तन करने का जो विचारणीय माध्यम प्रवाह सम्भवे वह विचित्र था तो बेटा! देखो, दोनों विराजमान हो गये। रात्रि का जब अन्तिम चरण रह गया, तो राम ने अपने आसन को त्यागा उन्होंने अपने आसन को त्यागते ही दृष्टिपात किया कि लोमश और कागभुषुण्ड जी विद्यमान है। उन्होंने बेटा! दोनों ऋषियों के चरणों को स्पर्श किया। उन्होंने कहा कहो राम! तुम्हारा चिन्तन तो बड़ा प्रियतम है। तुम्हारी अन्तरात्मा की प्रतिभा मानो महान है अथवा नहीं। राम ने कहा प्रभु! मेरा अन्तरात्मा कुछ प्रभु के आनन्द के लिये गमन करने लगा है। पूर्णरूपेण नहीं है, मैं प्रातः काल में याग करूँगा। मानो देखो, मैं वनों से साकल्य एकत्रित करके लाता हूँ। उस साकल्य के द्वारा मुझे याग करना है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने उसी प्रकार अपनी क्रियाओं से निवृत्त होकर के और साकल्य एकत्रित करने के पश्चात् महर्षि लोमश, कागभुषुण्ड जी भी उनके सहयोगी बने। और मुनिवरो! देखो, उन्होंने याग किया। याग करने के पश्चात् वे प्रभु से पुनः प्रार्थना करने लगे। अग्नि की धाराओं पर, अपने मानसिक विचारों को वायुमण्डल में प्रसारित करने लगे। तो मेरे पुत्रो! देखो, राम का इस प्रकार का तप चलता रहा जो बारह वर्ष का अनुष्ठान था।

रात्रि और दिवस की अवधारणा

रात्रि काल में वो दिवस स्वीकार करते थे। यह कहते थे कि साधक का यही तो रात्रि दिवस है। रात्रि तो तमोगुणी प्राणियों के लिये होती है। कि रजोगुणी प्राणां ब्रहे उनके लिये रात्रि होती है जो प्रभु के राष्ट्र में अपने को स्वीकार करते है बेटा! उनके लिए रात्रि दिवस कहलाता है वह रात्रि दिवस में ये स्वीकार करते हैं मानो देखो, प्रभु का जो अनुपम प्रकाश है अनुपम जो प्रकाश की धाराएँ हैं, उनके लिये रात्रि और दिवस कुछ नहीं होता उनका तो प्रकाश चला रहता है और गमन करता रहता है क्योंकि जो अपने को प्रभु के राष्ट्र में स्वीकार करता है वह प्राणी धन्य है। उन प्राणियों का बड़ा सौभाग्य रहा है तो बेटा! देखो, राम ने बारह वर्ष तक इस प्रकार का अनुष्ठान किया। परन्तु देखो, वह जो तेजां ब्रह्माः दिव्यां ब्रहे मेरे प्यारे! एक आसन में विद्यमान होकर के उनकी जो दिव्या सीता मानो वह गायत्री छंदो का पठन-पाठन, अपने गृह में, अपने मौन और अस्वन्ध देखो, मानसिक जपन किया करतीं तो बेटा! देखो, इस प्रकार जब क्रियाकलाप मानवीय जीवन में क्रियाओं में रत रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वो महानता को गमन करता है। तो मेरे प्यारे! हमें कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि बारह वर्ष का इस प्रकार का कठोर तप किया। नाना ऋषिवर आते वार्ता प्रकट होतीं मेरे प्यारे! वेद के मन्त्रों के ऊपर अन्वेषण होता और विचार विनिमय में कर्तव्यवाद के ऊपर मानो देखो चर्चा होती।

अनुशासन से आत्मोन्नति

एक समय बेटा! भृंगी ऋषि दद्दड ने यह कहा, राम से कि भगवन देखो, यह राष्ट्र क्या है? उन्होंने कहा ये जो राष्ट्र है ये राष्ट्र अमृत कर्तव्यासुधे मानो देखो, यह कर्तव्यवाद का पालन करने वाला ही राष्ट्र को जान सकता है उन्होंने कहा प्रभु कर्तव्यवाद क्या है? उन्होंने कहा प्रत्येक इन्द्रियों का जो क्रियाकलाप है उसको विशुद्ध रूप में लाने का नाम कर्तव्य कहा गया है यदि देखो, राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो राष्ट्र में रहते हुए स्वय को अनुशासन में रहना है। कर्त्तव्यवादी बनके राष्ट्र को उन्नत बनाना है। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक उनके हृदयों में समाहित हो गया। भृंगी जी ने कहा कि प्रभु! आप इसीलिये तपस्या कर रहे हैं कि मुझे कर्तव्यवादी बनना है। उन्होंने कहा नहीं, मुझे अपने आन्तरिक जगत में जो अशुद्ध संस्कार है अन्तः करण में जो विद्यमान है उन्हें मैं नष्ट करना चाहता हूँ उन्हें मैं मानो देखो, भोगू भी तो सूक्ष्म बनाकर के, भोगवाद में लाने का प्रयास कर रहा हूँ। मेरे पुत्रो! ये वाक् ऋषि के हृदय में समाहित हो गये। देखो, बारह वर्ष का कठोर तप करने के पश्चात उनका अयोध्या में गमन हुआ। अयोध्या में जब प्रवेश किया, तो अयोध्या में पुनः से वो तरंगें ओत-प्रोत हो गयी, वही आनन्द की तरंगें मेरे पुत्रो! देखो, उस समय महात्मा भरत ने उनका स्वागत किया और उनके चरणों की वन्दना करते हुए मेरे प्यारे! उन्होंने ऋषि मुनियों को निमन्त्रित किया और निमन्त्रित करके मुनिवरो! देखो, राम को राज्याभिषेक के लिये आमन्त्रित किया। आमन्त्रित करके उसे राजस्थली पर मेरे पुत्रो! देखो, महाराजा शिव, हिमालय की कन्दराओं में, और महर्षि श्वेतकेतु, महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र और भी नाना ऋषि, महर्षि वाल्मीकि इत्यादि ऋषियों ने बेटा! देखो, उनको राजस्थली पर प्रदान किया गया। क्योंकि हमारे यहाँ ये नियमावली मानी गयी है कि जब भी राज्याभिषेक होता है, उसको ब्रह्मवेत्ताओं की चुनौती होनी चाहिए। जब भी निर्वाचन होता है, किसी भी काल में, किसी भी राष्ट्र का निर्वाचन हो तो उसमें ब्रह्मवेत्ता होने चाहिए। वह जो ब्रह्मनिष्ट वे जब राष्ट्र का निर्वाचन करते हैं तो बेटा! राष्ट्र में महानता की तरंगें ओत-प्रोत हो जाती हैं। और कर्तव्यवादी राष्ट्र और प्रजा दोनों अपने में सहप्रियता में रत हो जाते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, उस समय महाराजा राम का जो निर्वाचन हुआ उसमें सब ब्रह्मवेत्ता थे, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता, महर्षि भंगी ब्रह्मवेत्ता मेरे प्यारे! देखो महर्षि वैशम्पायन ब्रह्मवेत्ता थे मुनिवरो! देखो, महर्षि प्रवाहण ब्रह्मवेत्ता थे, और मुनिवरो! देखो, महर्षि विश्वामित्र और महाराजा शिव मेरे पुत्रो! देखो, वह भी ब्रह्म की पगडण्डी को, राष्ट्र को भोगते थे परन्तु उनका जो क्रियाकलाप था वह बड़ा विचित्र था। तो मेरे प्यारे! सब ब्रह्म को जानने वाले ऋषि, महर्षि विश्वामित्र इत्यादि अमृतम् ब्रह्मा लोकाम् महर्षि वाल्मीकि जी जिन का बड़ा कठोर तप रहा है। तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने राज्याभिषेक किया और राज्याभिषेक करने के पश्चात बेटा! ऋषि-मुनियों का राजस्थली से बेटा! आश्रम को गमन हुआ।

राजा का अध्वर्यु स्वरूप

मेरे प्यारे! देखो, ऐसा स्मरण आता रहा है। राष्ट्र का पालन करना, राष्ट्र की प्रजा में भ्रमण करना, और मुनिवरो! देखो, ब्रह्म का उपदेश देना, आत्मीय चर्चा और आत्म चर्चाओं की विवेचना में परिणत रहना और विज्ञान में रत रहकर के मुनिवरो! देखो, राष्ट्र को उन्नत बनाना क्योंकि राजा जब तक ब्रह्मवेत्ता नहीं होगा तब तक राष्ट्र ऊँचा नहीं बनेगा। और प्रजा में महानता नहीं आयेगी और मुनिवरो! देखो, राजा जब तक अध्वर्यु नहीं होगा। अध्वर्यु उस राजा को कहते हैं जो राजा बेटा! हिंसा से रहित होता है। हिंसा से रहित होने का नाम अध्वर्यु है जैसे यज्ञशाला में, जब यज्ञशाला का यजमान निर्वाचन करता है तो एक ब्रह्मा का निर्वाचन करता है, द्वितीय उद्गाता का निर्वाचन करता है। और तृतीय मानो अध्वर्यु का निर्वाचन करने के पश्चात् जब उसे आज्ञा देते हैं, होताजन, तब वह यजमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता है। इसी प्रकार अध्वर्यु उसे कहते हैं यज्ञशाला

में जो साकल्य में किसी प्रकार की भी हिंसा न होने दें। उसी प्रकार राजा को अध्वर्यु कहते हैं। क्योंकि राजा के राष्ट्र में यदि हिंसा होती है। तो मानो जानो कि वो राष्ट्र का अधिकारी नहीं है इसीलिये राजा को विचारना चाहिए कि वह अध्वर्यु बनकर के राष्ट्र का पालन करें और जब अध्वर्यु बन जाता है तो मुनिवरो! देखो, वह महान बनकर के हिंसा नहीं होने देता। मेरे प्यारे! क्योंकि ब्रह्मवेत्ता यह जानता है कि किस-किस प्राणी का जो परमात्मा ने रचना, रचनात्मक की है उसका क्या-क्या गुण है। प्रत्येक प्राणी के गुणों को जानता है। जितने भी प्रभु के राष्ट्र में नाना प्रकार की योनियाँ हैं उन योनियों का मानो देखो, उनकी वृत्तियों को जानने वाला है। और जो राजा सुरा और सुन्दरी में रमण करने लगता है। मानो द्रव्यपति बनने की इच्छा करता है। वो राष्ट्र और प्रजा दोनों अन्धकार में रत होकर के एक समय रक्त भरी क्रान्ति में नष्ट हो जाते हैं।

वैदिक काल में शिशु की जन्म स्थली ऋषियों के आश्रम

तो मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें बहुत-सी चर्चाएँ की हैं और वर्णन किया है कि मुनिवरो! स्मरण आता रहता है कि समय-समय पर ऋषि-मुनियों की सभाएँ होती रही हैं। और ब्रह्मवेत्ताओं का नृत्य होता रहा है क्योंकि ब्रह्मवेत्ता ही बेटा! संसार में महान कहलाता है। और ब्रह्मवेत्ता ही मानो त्याग पूर्वक संसार में अपने जीवन को व्यतीत करता है। तो हमारे यहाँ बेटा! देखो, राम से पूर्व भी जो नाना राजा हुए हैं उन सब राष्ट्रों का एक नियम रहा है वह राजलक्ष्मियों के जो भी सन्तानों का जन्म हुआ है, मानो उसके पिछले भाग में एक ऋषि मुनियों का बड़ा उत्तम विचार रहा है, कि आश्रमों में या भयङ्कर वनों में जन्म लेंगे तो उनकी प्रतिभा महान बनी रहेगी। राजस्थलियों में जो जन्म लेने वाले हैं उनके जीवन में ऐश्वर्य आ जाता है। और ऐश्वर्य जो है ये मानवीयता और राष्ट्रवाद के लिये बेटा! बड़ा अनहित कहलाता है तो मुनिवरो! देखो, विचार आता रहता है मुझे स्मरण है जितने भी महापुरुष हुए हैं इस संसार में सब का जन्म, सबका देखो, आहार और व्यवहार त्यागपूर्वक रहा है।

संस्कार हेतु वातावरण

मुनिवरो! इसी प्रकार देखो, जब माता सीता के गर्भ में शिशु प्रवेश हो गया था, तो उसे वाल्मीकि आश्रम में प्रवेश किया गया। क्योंकि महर्षि वाल्मीकि मेरे प्यारे! जहाँ वो ब्रह्मवेत्ता थे वहाँ वो लेखनीबद्ध करने वाले थे। जहाँ वो लेखनीबद्ध करते वहाँ आयुर्वेदाचार्य भी थे। तो मेरे पुत्रो! देखो, आयुर्वेद आचार्यों के यहाँ सीता का प्रवेश कराया गया। मेरे पुत्रो! देखो, धनुर्विद्या में महर्षि वाल्मीकि बड़े पारायण थे। मेरे पुत्रो! देवर्षि नारद मुनि ने महर्षि वाल्मीकि को देखो, धनुर्विद्या प्रदान की थी। तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है। वह बालकाल बाल्यां ब्रह्माः लव देखो, उसका अस्सुतं जन्मं ब्रह्माः लोका जनम् लव का जन्म मुनिवरो! देखो, माता सीता से हुआ। और मुनिवरो! देखो, वाचकेतु मुनि महाराज के आश्रम में एक कन्या रहती थी शकुन्केतु सुमित्रा रहती थी। मानो उसका गर्भ देखो, महर्षि वाल्मीकि जी के आश्रम में कुशा के आसन पर विद्यमान हुआ उन्हें प्राप्त हो गया। तो माता सीता ने उसका भी पालन किया तो मेरे प्यारे! दोनों, का पालन किया और धनुर्विद्या दोनों को प्रदान करायी तो मुनिवरो! देखो, विचार आता रहता है। इस धनुर्विद्या को पान करने के लिये महर्षि वाल्मीकि जी के आश्रम में बेटा लगभग 85 ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। धनुर्विद्या देखो, माता उन्हें बाल्यकाल में शिक्षा देना और मातं ब्रह्मे ऋषि बेटा! देखो, अपनी वृत्तियों में रत कराना यह उनका कर्त्तव्य रहा है।

अयोध्या और उसके राजा

बेटा! मैं बहुत दूरी चला गया हूँ साहित्य के उन प्रश्नों को मैंने तुम्हें स्पष्ट कराया जो बेटा! उनको विचार-विनिमय करता हुआ दूरी चला गया हूँ विचार-विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, राम अपने राष्ट्र का पालन

कर रहे हैं अयोध्या में। क्योंकि अयोध्यापुरी का जो निर्माण किया था वो बेटा! देखो, भगवान मनु ने किया था और भगवान मनु के लगभग, 81561 बेटा! वंशलजों ने राज्य किया इस अयोध्या में, मुनिवरो! देखो, इसी प्रकार उसके पश्चात देखो, ये जो रघुवंश था, रघुवंश में लगभग मुनिवरो! देखो, 11561 राजाओं ने राज किया इस अयोध्या में। और इससे पूर्व भी बेटा! देखो, बहुत से राजा हुए है मध्यकाल में। तो मेरे प्यारे! क्योंकि राजा सगर भी अयोध्या में रहे, महाराजा भगीरथ भी अयोध्या में रहे, महाराजा देखो, हरिश्चंद्र भी अयोध्या में रहे। देखो, महाराजा दिलीप, महाराजा रघु, महाराजा अज इत्यादि देखो, अयोध्या में राज करते रहे। तो बेटा! देखो, अयोध्या का जो निर्माण हुआ था वो ऐसा निर्माण था जैसे परमपिता परमात्मा ने मानो सृष्टि के प्रारम्भ में मानव शरीर का निर्माण किया था। आठ चक्रा नौ द्वारा यह अयोध्या पुरी कहलाती थी। मेरे पुत्रो! देखो, इसमें आठ चक्र नौ द्वार थे मुनिवरो! देखो, यह अयोध्या पुरी थी। इसी प्रकार हमारा जो मानव शरीर है इसमें भी आठ चक्र हैं और नौ द्वार कहलाये गये हैं। बेटा! नौ द्वार आठ चक्रों वाली हमारी ये देखो, ये ब्रह्मपुरी कहलाती है। ये अयोध्यापुरी है तो इसके ऊपर देखो, हमें विचार-विनिमय करना है।

वर्तमान का हिंसक राष्ट्रवाद

आओ मेरे प्यारे! देखो मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिये आया हूँ कि राष्ट्र जब भी ऊँचा बना है तो वह तपस्या से ऊँचा बना है, वह त्याग से ऊँचा बना है। और जब मुनिवरो! देखो, उसमें त्याग प्रवृत्ति नहीं रहती, केवल देखो, यह संसार कहीं चला जाओ, नष्ट हो जाओ, बस मेरा स्थान बना रहे, तू राजा बना रहे, ऐसा जो राजा होता है वो बेटा! ऐसी प्रजा और राज देखो, दोनों एक समय वो काल आता है, कि दोनों ही नष्ट हो जाते हैं। तो मेरे पुत्रो! देखो, आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मेरे प्यारे महानन्द जी राष्ट्र की बड़ी चर्चा करते रहते हैं मानो देखो, इससे पूर्व काल में हमने माताओं का बड़ा महत्त्व वर्णन किया कि माता जो अपने दायित्व को जानने लगती हैं देखो, माताओं का जीवन ऊँचा बनता है, माता जब तपस्वी होती है। और जिस काल में माता देखो, श्रृंगार में रत हो जाती है उस काल में उसका मातृभाव है वो समाप्त होने लगता है। इसलिये मैंने बहुत पुरातन काल में मेरे पुत्र महानन्द जी के विचारों के कथनानुसार अपने विचार व्यक्त किए थे कि देखो, सबसे प्रथम माताओं का जो कण्ठ है वह ज्ञान और विज्ञान से सजातीय रहना चाहिए, आभूषण उसका ज्ञान कहलाता है, विज्ञान कहलाता है। क्रियात्मकता में रत रहना होता है।

राजा की कार्य-प्रणाली

मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार राष्ट्र का भी, राजा का जो ज्ञान है, भ्रमण है, वो ज्ञान और विज्ञान रहना चाहिए और मानो देखो, उसकी यात्रा इस लोक में प्रियता नहीं, ऐसा मैं यह उच्चारण करता रहता हूँ। हम कहते रहते हैं कि राजा की यात्रा जैसे लोक में रहती है। ऐसी लोकलोकान्तरों में रहनी चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, यानों में इतना ऊर्ध्वा में विज्ञान होना चाहिए जिस विज्ञान में वैज्ञानिक यन्त्रों में विराजमान होकर के बेटा! देखो, वह पृथ्वी से उड़ान उड़े और लोक-लोकान्तरों की यात्रा करते रहें। उनके मस्तिष्क में याज्ञिकवाद रहना चाहिए। ऐसा मुनिवरो! देखो, हमारा वैदिक साहित्य कहता है। वेद का मन्त्र कहता है कि मुनिवरो! देखो, राजा को वेद विष्णु कहता है। मेरे पुत्रो! क्योंकि विष्णु अपनी मानवीय इन्द्रियों को पालन करने वाले को विष्णु कहते हैं। जैसे आत्मा का नाम विष्णु है, ऐसे ही राजा का नाम भी विष्णु है। और राजा जो अपनी आत्मीयता का पालन करता है और वह विष्णु राष्ट्र अपने को बना देता है अपने राष्ट्र में मेरे पुत्रो! देखो, सदाचार महान होता है उसके राष्ट्र में देखो, प्रवृत्तियाँ विचित्र बनी करती हैं। तो इस प्रकार का जो विष्णु राष्ट्र है वो अपने में महान और पवित्र

बनता रहता है तो मेरे पुत्रो! देखो, विष्णुश्चनं ब्रह्माः वह ब्रह्म और विष्णु बनकर के अपने मानवीयतव को ऊँचा बनाता है। यह है बेटा! आज का वाक्।

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है, मेरे पुत्रो! मैंने, बहुत-सी गाथाएँ बहुत-सा वर्णन किया। विचार केवल यह कि मुनिवरो! देखो, परमपिता परमात्मा का जो राष्ट्र है। ये जो परमात्मा का जगत् है यह महान और पवित्र कहलाता है इसके ऊपर सदैव चिन्तन, मनन रहना चाहिए और मुनिवरो! देखो, वह रात्रि और दिवस के ऊपर विचार ज्ञानियों का, विवेकी पुरुषों का देखो, रात्रि और दिवस सभी मानो देखो, प्रभु का राष्ट्र कहलाता है। वह प्रभु की प्रतिभा कहलाती है तो मानो देखो, इसी प्रकार प्रत्येक वेद मन्त्र बेटा! जहाँ राष्ट्र के लिये घोषणा कर रहा है जहाँ मुनिवरो! देखो, धनुर्याग की घोषणा कर रहा है वहाँ प्रत्येक वेद मन्त्र बेटा! परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता और महानता की घोषणा कर रहा है मानो देखो, उसका जो जगत है उसका जो राष्ट्र है उसका जो ये ब्रह्माण्ड है ये अनन्तता में गमन करने वाला है। तो हमें प्रभु की महिमा को विचारते हुए मेरे पुत्रो! देखो, राष्ट्र और कर्त्तव्य का पालन करना, यह हमारा कर्त्तव्य, महान कहलाता है। हम प्रभु के राष्ट्र में जभी अपने को स्वीकार करेंगे। अन्यथा उस परमात्मा को जानने वाला बेटा! देखो, राष्ट्र से उपराम हो जाता है। ये है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम देवतम परमपिता परमात्मा की महिमा और वैदिकता में अपने को ले जाना, मेरे पुत्रो! यह हमारा कर्त्तव्य है आज का विचार अब हमारा समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठनः। ओ३म् देवाः आभ्यां ऋषि वाचन्नमः रथं आभ्यां देवाः।दिनांक 17.2.89, ओ३म् यशोश्चां आपा रथं ब्रह्मणः ऋषि वायुगतं आपाः। अच्छा भगवन! आज्ञा, स्थान स्वाहेडी, बिजनौर।

९ जगत् के दो प्रकार १८ ०२ १९८९

देखो मुनिवरो ''वाचा स्वप्राह्वे प्रविहः व्रणा सुन्धनम्'' मानो देखो, वेद का मन्त्र कहता है हे मानवः! तू समुद्र की भाँति बन और समुद्रां व्रहे जैसे वह अमृत भी देता है। और मुनिवरो! देखो, उसकी आभा में रत रहने वाला मुनिवरो! देखो, चन्द्रमा हमें अमृत बहाता रहता है, वही अन्तरिक्ष में मेरे पुत्रो! आभामय उदय होकर के रहता है। और वह उद्गीत गाता रहता है। मानो जल और वायु का जब समन्वय होता है, तो वह गान गाता रहता है। और ध्वनि को विचारने वाले, अपने में अपनी ध्वनि को ध्वनि में सम्पर्क लाते हुए एक ध्वनिवान होते रहते हैं।

यौगिकवाद एवं रूढ़िवाद की व्याख्या

तो मेरे पुत्रो! देखो, मुझे वो काल स्मरण है। जब ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान होकर मानव के जीवन के सम्बन्ध में एक आभा नियुक्त करते रहे हैं। सामाजिक पद्धति का निर्माण करते रहे हैं। मेरे प्यारे! हमारे यहाँ दो प्रकार की पद्धति मानी गयी है, एक पद्धति वह कहलाती है जो यौगिकता में रत रहने वाली है, उसको यौगिक कहते हैं। और एक पद्धति वह होती है जो रूढ़ि में परिणत हो जाती है। रूढ़ि तो मानो देखो एक है एक मानो यौगिक हैं तो हमें दोनों को विचारना है बेटा! देखो, बिना रूढ़ि के हम अपने में पालना नहीं कर पाते। और बिना यौगिकता के भी हम पालना में रत नहीं हो सकते। मेरे प्यारे! दोनों, का हमें समन्वय करना है। जैसे एक मानव के हृदय में रूढ़ि आयी, माता के हृदय में एक रूढ़ि आती है कि ये मेरा पुत्र है परन्तु जब वह माता उसे यौगिकता में लाने का प्रयास करती है। तो रूढ़ि तो यह है कि मानो यह मेरा पुत्र है मैं इसकी आभा में रत हो गयी हूँ। परन्तु यौगिकता वह कहलाती है यदि तेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बाल्य यदि ये राष्ट्र का कर्मवेत्ता बन गया। राष्ट्रवेत्ता बन गया तो इसका जीवन सामूहिक बन गया। और इसके जीवन में मानो देखो, एक सामूहिकता आ गयी है। यदि वही पुत्र माता का अधिराज बन जाये तो मेरे प्यारे! देखो, वह सर्वत्र आभा में और वह राष्ट्र की सम्पदा बन जाता है।

अपनापन अथवा समग्रता

वह राज्य के जितने भी प्राणी मात्र है, सबकी सम्पदा है, उसका जो विचार है, उसका जो क्रियाकलाप है, उसका जो भी कुछ है वो सब एक यौगिक कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, सर्वांग में यौगिकता मानी गयी है। और सङ्कीर्णता में उसी को रूढ़िवाद कहा जाता है।

शब्द का रूढ़िवाद व यौगिकवाद

तो मुनिवरो! देखो, हमें विचारना है कि यौगिकता के ऊपर बल देना है। जब हमारा यौगिक जीवन बन जाता है तो मानो देखो, यौगिकता को हमें धारण करना है। मेरे प्यारे! देखो, शब्द उच्चारण करना और शब्द में मुनिवरो! देखो, प्रभु को दृष्टिपात करना उसका नाम यौगिकता कहलाता है। और वही अप्रतम ब्रह्म वही एक ममतामयी में एक शब्द का उद्गीत रूप लिया जाता है, तो वह रूढ़िवाद बन जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जितनी सत्यता में व्यापकवाद होगा, वह यौगिकवाद है, और जितना सत्यवाद में एक सø ीर्णता और अपनापन होगा उतना ही मुनिवरो! देखो, वह रूढ़िवाद कहलाता है।

धर्म और कर्त्तव्यवाद

इसी प्रकार मेरे पुत्रो! हमारे यहाँ धर्म के ऊपर भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचना होती रहती है मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन किया, कि जो यौगिकता में रत रहने वाला, उसका नाम धर्म है। एक मानव अपने कर्तव्यवाद में रत हो रहा है। कर्तव्यवाद का वो पालन कर रहा है। तो मानो देखो, वह कर्तव्यवाद उसकी वह

यौगिकता कहलाती है, वह रूढ़ि नहीं। देखो, यौगिकवाद है, उस यौगिकवाद को अपनाना है। मेरे प्यारे! धर्मणां ब्रह्मा लोकप्रहा जैसे माता अपने पुत्र का पालन कर रही है। वह उसे शिक्षा दे रही है, वह उसे शिक्षित बना रही है। और वह कहती है हे बाल्य! तू आत्मा है, तू चेतन्य है, तू अखण्ड रहने वाला आत्मा है। तो वो माता के विचार यौगिकवाद में परिवर्तित हो जाते हैं। और यदि माता यह विचारती है कि अमृतम् हे आत्मा! हे बालक! यदि तूने मेरे गर्भ से जन्म लिया है तो तुझे वीरत्व को प्राप्त होना है और वीरत्व को प्राप्त होकर के मेरे शत्रुओं को नष्ट करना है तो मानो देखो, यह माता का विचार तो विशुद्ध है, परन्तु इसमें रूढ़िवाद परिणत हो जाता है।

तो मानो देखो, तब यौगिकता और रूढ़िवादिता दोनों की सम्तुलना करले, तो विचारों की वृत्तियों में मानो देखो, उसमें रूढ़ि है, और विचारों में ही बेटा! देखो, यौगिकवाद है। तो हमें विचारना है एक विज्ञानवेत्ता है वह विज्ञानवेत्ता यन्त्रों का निर्माण कर रहा है। एक तो वह यह विचारता है वैज्ञानिक कि मुझे प्रभु की प्रतिभा को दृष्टिपात करना है। कि प्रभु ने यौगिक मानो देखो, इस रूढ़ि प्रवाह, इस विज्ञान में क्या-क्या निहितता प्रदान की है। मेरे प्यारे! देखो, अपनी स्थली में विद्यमान है विचार रहा है कि मुझे राष्ट्र को उन्नत बनाना है, और द्वितीय राष्ट्र को मुझे विजय करना है यन्त्रों के द्वारा मुझे ऐसे यन्त्रों का निर्माण करना है, बेटा! ब्रह्मास्त्रों का निर्माण कर रहा है। अग्नेयास्त्रों का निर्माण कर रहा है। वह मानो देखो, ऐसे यन्त्रों का निर्माण कर रहा है, बेटा! जिससे वह अपने राष्ट्र को विजय करना चाहता है।

भस्मासुर गाथा विज्ञान के दुरूपयोग का परिणाम

जैसे हमारे यहाँ एक लौकोक्ति आती है कहते हैं एक समय महाराजा भस्मासुर जो महाराजा शिव के शिष्य कहलाते थे, उनके सेवक थे। तो मुनिवरो! देखो, जब वह अमृतं ब्रह्मे बेटा! देखो, उन्होंने तप किया और भङ्यंकर जब तप किया तो मुनिवरो! देखो, महाराजा शिव उनके द्वार पर आये, कहा कि क्या चाहते हो? उन्होंने कहा, भस्मासुर ने कि प्रभु! आज्ञा दे, तो मैं ऐसा व्रत चाहता हूँ जिसमें जो मुझे नष्ट करना चाहता हो वह नष्ट हो जाये। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा शिव ने एक उन्हें कंगन प्रदान कर दिया, आभूषण प्रदान कर दिया और उन्होंने कहा जिसके मस्तिष्क के ऊपरले विभाग में यह तुम्हारा आभूषण जायेगा, वही नष्ट हो जायेगा। तो मानो देखो, उन्होंने वह स्वीकार कर लिया। मेरे पुत्रो! ऐसा कहा जाता है, कुछ समय के पश्चात उसके मन में यह आकृति आयी कि ये जो पार्वती मानो देखो, महाराजा शिव के द्वार पर रहती है, ये मेरे द्वार पर आनी चाहिए। तो मानो देखो, महाराजा भस्मासुर ने कहा प्रभु! मेरी ऐसी इच्छा है कि ये पार्वती मुझे प्रदान कर दीजिये। मेरे प्यारे! महाराजा शिव एक बड़े आपत्तिकाल में परिणत हो गये। उन्होंने कहा क्या किया जाये? मेरे प्यारे! देखो, उन्हें महाराजा विष्णु देखो, विष्णु देवत्वाम् राजा ने उन्हें यह एक प्रेरणा दी कि इनका दोनों का नृत्य होना चाहिए और जैसे ही महाराजा अमृतां ब्रह्मे लोकाम् मेरे प्यारे! देखो, अशुद्ध प्रवाह जब महाराजा शिव ने इसको स्वीकार नहीं किया। जब स्वीकर नहीं किया।

माता पार्वती का आत्मविश्वास

तो मेरी प्यारी! माता पार्वती ने स्वतः कहा कि प्रभु! आप ऐसे आपत्ति काल में क्यों आ रहे हैं? मेरा और भस्मासुर दोनों का नृत्य हो जाना चाहिए। उन्होंने कहा देवी! यह प्रेरणा तो मुझे राजा विष्णु ने भी प्रकट की है। विष्णु राजा ने दी है और तुम मुझे प्रेरणा देखो, द्वितीय दे रही हो, तो तुम्हारा नृत्य हो जाये। मेरे प्यारे! देखो, दोनों का नृत्य होने लगा और जैसे ही मुनिवरो! देखो, माता पार्वती का जहाँ भुज जाता वहीं भस्मासुर का भी जाता। जब वह देखो, उसके मस्तिष्क के ऊपरले भाग में पहुँचा पार्वती का, तो महाराजा भस्मासुर का

पहुँचा तो बेटा! भस्मासुर उस कंगन से स्वतः ही भस्म हो गये। मेरे प्यारे! क्योंकि मस्तिष्क के ऊपरले भाग में चला गया। परिणाम यह होता है कि राजा के राष्ट्र में जब विज्ञान इस प्रकार का पनपता है कि वो देखो, अपने ही यन्त्रों से अपने ही मानो देखो, कंगन के आभूषणों से जो स्वतः नष्ट होने वाला विज्ञान है मेरे प्यारे! देखो, वो राष्ट्र को ही हानिप्रद होता है। उसे हमारे यहाँ रूढ़िवाद में परिणत किया जाता है। उसे रूढ़ि कहते है जो द्वितीय राष्ट्रों को नष्ट करने वाले यन्त्र का निर्माण करता है, वह स्वतः अपने राष्ट्र के लिये ही हानिप्रद होता है। तो मुनिवरो! देखो, इसी प्रकार जैसे भस्मासुर की गाथा है। यह भस्मासुर एक विज्ञानवेत्ता मानो देखो, राष्ट्रीयत्व में एक रूढ़िवाद में परिणत किया गया है।

महर्षि भारद्वाज के विज्ञान की उपादेयता

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय यह कि हमारे यहाँ विज्ञानेवत्ता बेटा! द्वितीय विज्ञानवेत्ता ऐसा है, जो यह निर्माण कर रहा है कि मेरी बुद्धि का विकास हो। मैं देखो, प्रत्येक कर्म को जानना चाहता हूँ। जैसे बेटा देखो! महर्षि उद्यालक गोत्र में शिकामकेतु उद्यालक के यहाँ यन्त्रों का निर्माण हुआ, इसी प्रकार महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ बेटा! यन्त्रों का निर्माण हुआ बेटा! देखो, उन्होंने ज्ञान कार्य के लिये नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया। उन्होंने ब्रह्मास्त्र, वरुणास्त्रः और भी नाना प्रकार के अस्त्रों का निर्माण किया। बेटा! एक समय ब्रह्मचारी कवन्धी और ब्रह्मचारी सुकेता, उन्हें वेद में एक मन्त्र प्राप्त हुआ और वेद मन्त्र कह रहा था ''श्वंजनं ब्रह्मे सुक्रत्व व्राचि देवत्वां ममत्वां ब्रह्रे व्रताः विशति पुत्राः'' तो वेद की एक आख्यिका उन्हें स्मरण आयी तो ब्रह्मचारी सुकेता कहते हैं, कवन्धी से कि हे कवन्धी! ये वेद मन्त्र यह कहता है कि देखो, शुक्रणां ब्रह्रा व्रत्ते मानो देखो, इसमें तरंगों का प्रादुर्भाव है और यह मानो देखो, जैसे एक परमाणु गति कर रहा और वह माता के गर्भ में प्रवेश कर रहा है और माता के गर्भ में मानों देखो, वही एक स्वत्तिक बन कर रहता है। तो क्या प्रभु! हम इस को साक्षात्कार, इसका निर्माण नहीं कर सकते? ब्रह्मचारी कवन्धी ने सुकेता से कहा हे सुकेता! तुम क्यों जानना चाहते हो? उन्होंने कहा प्रभु! मेरी इच्छा ऐसी है कि हमारी बुद्धि का विकास हो और मानो देखो, जिससे हमारा मानवतव एक विचित्रतव में प्रवेश हो जाये। क्योंकि विज्ञान को भी मानव को जानना चाहिए। विज्ञान को जानने से मानव की बुद्धि विकसित होती है और प्रभु की प्रतिभा का हमें भान होता है।

महर्षि भारद्वाज द्वारा विज्ञान की विवेचना

मेरे प्यारे! दोनों ब्रह्मचारियों के हृदय में यह समाहित हो गया और इस वेद मन्त्र की आख्यिका को ले करके भारद्वाज मुनि के कक्ष में बेटा! मध्यरात्रि में पहुँचे। जब शान्त वायुमण्डल था, दोनों ने बेटा! इस वेद मन्त्र को उद्गीत रूप में गाया तो महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि विचार तो तुम्हारा यथार्थ है परन्तु देखो, यदि तुम्हारा विचार बन गया तो अनुसन्धान करो और इसको क्रिया में लाने का प्रयास करो। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया जिन यन्त्रों में मुनिवरो! देखो, शुक्रत प्रवेश करते ही मानो देखो, उसमें शिशु है, उसमें परमाणु है, उसमें अणु है, उसमें तरंगे हैं। मेरे प्यारे! वही तरंगे मानो देखो, यन्त्र में प्रवेश करते ही जैसे माता के गर्भस्थल में एक निर्माणवेत्ता निर्माण कर रहा है। वही निर्माणवेत्ता देखो, उन यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगा। उस बिन्दु में दृष्टिपात आने लगा तो ब्रह्मचारी सुकेता ने कवन्धी से कहा हे कवन्धी! देखो, इसमें क्या गतियाँ आ रही हैं। तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने यन्त्र का ऐसे निर्माण किया कि एक मानो शुक्रत के, बिन्दु से उस मानव का जिसका वो शुक्रत है उसी मानव का चित्र दृष्टिपात आता रहता है जैसे पूर्णमदः पूर्णं व्रहे मेरे प्यारे! पूर्ण में से पूर्ण का निकास होता है। मेरे पुत्रो! जैसे माता के गर्भस्थल में यन्त्रों का निर्माण है उसी में निर्माणित करने वाला निर्माण करता रहता है। तो मेरे प्यारे! सूक्ष्म-सा एक एक परमाणु एक एक बिन्दु से मानव के जीवन

और मानव के क्रियाकलाप दृष्टिपात आते रहते हैं।

विज्ञान में अभिमान

तो मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान अपनी आभा में कितना विचित्र है। एक समय ब्रह्मचारी कवन्धी और ब्रह्मचारी सुकेता और यज्ञदत्त तीनों ब्रह्मचारियों का विद्यालयों में यह समावेश होने लगा कि इस विज्ञान में हम क्यों प्रवेश कर रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा क्यों न करें? मुनिवरो! कवन्धी ने कहा क्यों न किया जाये? उन्होंने कहा जानकारी के लिये। कि ये जो प्रभु ने जगत् रचाया है, ये मानो एक जानकारी के लिये है। देखो, ब्रह्मचारी कवन्धी ने कहा यदि जानकारी में अभिमान आ जाएँ तो उन्होंने कहाँ ब्रह्मचारी यज्ञदत्त बोले यदि अभिमान आ जाएगा तो कर्त्ता का अभिमान ही उसको नष्ट कर देगा। तो देखो, जब उन्होंने ये कहा, भई! जानकारी के लिये जानने का प्रयास करो। परन्तु यदि तुम्हें इसमें अभिमान आ गया और यदि अभिमान की मात्रा आ गयी तो यह विज्ञान ही तुम्हारी मृत्यु का कारण बनता रहेगा। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यह विचारा जो निरभिमानता है, वो यौगिकवाद है और अभिमान आ जाना रूढ़िवाद है। अभिमान में आकर के वही विज्ञान मृत्यु का एक द्योतक बन जायेगा। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन किया ब्रह्मचारियों का यह समावेश होता रहा। इसी विचार को लेकर के बेटा! भारद्वाज मुनि के कक्ष में पहुँचे और भारद्वाज मुनि से कहा प्रभु! ये छः माह से हम इस यन्त्र के ऊपर अध्ययन कर रहे हैं प्रभु! हमारा यह मानो सङ्घर्ष चल रहा है कि विज्ञान क्यों जाना जाये?

ज्ञान विज्ञान की सारगर्भिता

यह भौतिक विज्ञान क्रिया में क्यों लाया जाये। तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा भई! इसको क्रिया में लाना, कोई पाप नहीं है। क्रिया में लाना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मानव का यह कर्त्तव्य है। उसके मनों में यह विचार आता रहता है कि मैं नाना प्रकार के आविष्कार करूँ। नाना प्रकार के यन्त्रों को जानने का प्रयास करूँ। मानो देखो, ये रचना जो रचना हो रही है, इसको जानने की अभिलाषा बनी रहती, मानो ज्ञान में वृद्धपन क्योंकि ज्ञान सदैव नवीन रहता है मानो वो आश्चर्य का शब्द बना; देखो, जैसे ज्ञान है वो परम्परागतों से चला आ रहा है। जैसे आविष्कार हैं देखो, परम्परागतों से गतिवान हो रहे हैं परन्तु आविष्कार कदापि नवीन नहीं होता है। वो परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में उसको रचा है और मानव ने उसको जानने का प्रयास किया है। आविष्कार किया है उसको, मानो जब वो आविष्कार करता है तो नवीन प्रतीत होता है परन्तु वो तरंगें तो परम्परागतों से पूर्व में निहित रहती है। तो वो कदापि उसमें वृद्धपन सदैव रहता है। नवीनता और वृद्धपन दोनों का समावेश होता रहता है तो इसलिये उसमें न तो नवीनता आती है न वृद्धपन आता है सदैव एक रस बना रहता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि-मुनियों की यह बड़ी विचित्र धारा बनी रही। कि उनके चिन्तन और मनन करने का माध्यम बड़ा विचित्र रहा है। तो महर्षि भारद्वाज ने ब्रह्मचारियों को ये निर्णय कराया कि जो एक रस रहने वाला ज्ञान और विज्ञान है उसको सदैव मनन करना चाहिए। और मनन करते-करते उसी में अपने को समावेश करना चाहिए है। उसमें न तो देखो, अभिमान आता है और न उसमें निराशा आती है वो सदैव एकरस बना रहता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि-मुनियों ने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया। इस प्रकार का विज्ञान प्रायः मानवीय मस्तिष्कों में सदैव नृत करता रहा है। विचार करता रहा है।

आध्यात्मिक विज्ञान

मेरे पुत्रो! देखो, एक विज्ञान तो यह है और दूसरा विज्ञान यह है जिसे हम आध्यात्मिक विज्ञान कहते हैं। आध्यात्मिकवाद यह कहता है कि हमारी मृत्यु ही क्यों होती है? हम शरीर से क्यों गमन कर जाते हैं। हम

संसार में आते हैं, आकर के यहाँ अपने क्रियाकलाप करके चले जाते हैं, मानो अपनी प्रतिभा त्याग देते हैं। बेटा! एक समय मुझे स्मरण है कि महर्षि शिकामकेतु के यहाँ बेटा! देखो, एक सभा हुई थी जिसमें देखो, महर्षि वैशम्पायन और महर्षि विभाण्डक दोनों ने एक प्रश्न किया था ऋषि से कि महाराज! आप आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है या भौतिक विज्ञानवेत्ता हैं? तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने कहा कि न मैं भौतिक विज्ञानवेत्ता हूँ और न मैं आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता हूँ। और महाराज! आप कौन हैं? उन्होंने कहा मैं तो कुछ-कुछ प्रभु के ज्ञान और विज्ञान में से कुछ अपनी गम्भीर मुद्रा में प्रवेश कर जाता हूँ और गम्भीर मुद्रा में, ये जो मानो देखो, रत्न मेरे समीप आते हैं उनको लाकर के उनका मैं आविष्कार करता रहता हूँ।

निरभिमानी ऋषि-मुनि

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि का उत्तर इतना महान था। मेरे पुत्रो! उन्होंने विभाण्डक जी ने कहा प्रभु! आप विज्ञानवेत्ता नहीं हैं। उन्होंने कहा नहीं मैं विज्ञानवेत्ता नहीं हूँ क्योंकि विज्ञानवेत्ता तो प्रभु हैं जिन्होंने सृष्टि के प्रारम्भ में मानो देखो, महतत्व से, महतत्व में गति आयी, वही गति मानो देखो, परमाणुवाद में, अन्तरिक्ष में आयी, वह उग्र गति वायु में आयी, वही उग्र गति देखो, अग्नि में प्रवेश करती हुयी, वही उग्र गति मानो देखो, आपो में आती हुयी, ये संसार पिण्ड और चेतना के रूप में परिणत हो गया। उसी चेतना और पिण्ड के गर्भ में हम सब गमन कर रहे हैं। कोई देखो, पिण्ड के ऊपर विचार करने लगता है, कोई चेतना के ऊपर विचार-विनिमय करने लगता है। दोनों का मानो देखो, आविष्कार करने लगता है। तो हम न तो भौतिक विज्ञानवेत्ता है और न आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि का हृदय कितना निरभिमानी होता है। जो बेटा! तपस्वी होते हैं और उसको जानते हैं कि यह प्रभु की धरोहर है विज्ञान प्रभु की धरोहर है नाना प्रकार का अणु और परमाणु प्रभु की धरोहर है, इसको क्रिया में लाना हमारा कर्त्तव्य है। क्रिया में लाते रहें, क्रियावान बनें रहें, क्यों बने रहे? क्योंकि जिससे हमारा इस संसार में जीवन गढेले में न चला जाये। हम देखो, निग्रति गतियों में न चले जायें क्योंकि मन को तो कुछ न कुछ क्रियाकलाप करना ही है। मन को यदि हम उर्ध्वा में ले जाते हैं, प्रभु की सृष्टि में ले जाते हैं, तो हमारे जीवन का कल्याण हो जाता है। और यदि हम देखो, ध्रुवा में, प्रकृति में या रागद्वेषों में लगे रहते हैं तो हमारे जीवन का विनाश हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने इस प्रकार उनके प्रश्नों का उत्तर दिया।

विज्ञान का स्वरूप

वैशम्पायन बोले कि प्रभु! हम ये और जानना चाहते हैं कि आपको ये समाज विज्ञानवेत्ता कहता है, ये क्यों कह रहा है? उन्होंने कहा मुझे इसलिये विज्ञानवेत्ता कहते हैं, कि प्रभु का जो विज्ञान है उसमें मैंने कुछ मानो देखो, अपने मन को लगा दिया है। और प्राण को लगा दिया है और उसके मध्य में विचार आ गया है। और वही विचार मानो देखो, जब प्रसारण में आ गया तो मुझे विज्ञानवेत्ता कहने लगे। परन्तु विज्ञानवेत्ता तो प्रभु है। मेरे प्यारे! देखो, ये विचार-विनिमय करते हुए उनके जीवन की आभा इतनी विचित्र बनी रही। उन्होंने कहा तो प्रभु! अब लो आपने जाना क्या है? किस जानकारी से आपको विज्ञानवेत्ता कहने लगे?

विज्ञान की उपादेयता

उन्होंने कहा कि एक समय मैं और मेरी देवी विराजमान थे। मेरी धर्म देवी बोली कि प्रभु! हम प्रातःकालीन याग करते हैं, मानो याग में रहस्य क्या है तो मानो देखो, दोनों इस विचार में लग गये कि याग में रहस्य क्या है? तो रहस्य को विचारते-विचारते हम इस संसार, जो यह निकृष्ट संसार है, जो निकृत्य कहलाता है, इसे हम अपने से ओझल कर दें, या फिर हम से वो दूरी हो गया, और यन्त्रों में लग गये, हम याग में लग

गये, उन तरंगां को जानने में लगे रहे, तो लगते-लगते देखो, हमें उसमें विवेक आ गया। और विवेक आने से प्रत्येक औषध में, प्रत्येक वृक्ष में, हम प्रभु की सृष्टि को निहारने लगे। निहारते, निहारते यह परिणाम हुआ कि हम मानो देखो, यन्त्रों में अपने पूर्वजों को दृष्टिपात करने लगे। हमारे पूर्वज कहाँ रहते हैं? हमारे पूर्वजों के शब्द कहाँ रहते हैं? उनका क्रियाकलाप कहाँ रहता है? तो मानो देखो, वो द्यौ में, और द्यौ से देखो, द्यौ के अभ्यों के मध्य में वो शब्द और क्रियाकलाप विद्यमान रहते हैं। जब इस प्रकार विचारते रहे तो विचार-विनिमय करने का हमारा परिणाम यह हुआ कि हम मानो देखो, अपने कुटुम्ब, अपने पूर्वजों के दर्शनों का अध्ययन करने लगे, उन्हीं विचारों से वेद मन्त्रों का भी अध्ययन करने लगे। हमारे शब्द द्यौ-लोक में जाने लगे और मानो देखो जो शब्द सजातीय होता है, जो दर्शनों से गुथा हुआ होता है, जो दर्शनों से सजातीय होता है वही शब्द मानो देखो, द्यौ में जाता है। जो वेद मन्त्र का देखो, वेद मन्त्र, जैसे उद्गाता, उद्गीत रूप में गा रहा है और गाने वाला जो शब्द है वही द्यौ-लोक में जायेगा। जो शब्द मानो देखो आत्मा ''प्राणं व्रहे आत्मा बृहि व्रताम्'' मेरे प्यारे! देखो, जो हृदय से और प्राण के सन्निधान मात्र से और मन के सहयोग से बेटा! जो गान गाया जाता है हृदय में अगम्य बनकर के बेटा! वो शब्द द्यौलोक में जाता है। मेरे प्यारे! देखो, यजमान का वो शब्द द्यौलोक में जाता है। जो मानो देखो, हृदय से गान गाता हुआ, अग्नि को निहारता हुआ, और अग्नि में अपने शब्द को निहित करता हुआ कहता है कि मेरा शब्द द्यौ-लोक में जाना चाहिए। अपने अन्तर्हृदय से जो गानगाता है, तो मानो देखो, वो शब्द द्यौ-लोक में जाकर के, मेरे पुत्रो! बेटा, वो द्यौ लोक के अभ्योलोको वृत्तियों के मध्य में स्थिर हो जाता है। और वह मानो समय-समय पर उसी को प्राप्त होता रहता है। अन्त बेटा! उसी का यही होता है।

यज्ञ-महिमा

तो विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रो! देखो, विचार आता रहा। मेरे ऋषि ने वर्णन किया शिकामकेतु ने, हे वैशम्पायन! वो शब्द मानो स्थिर रहता है। वो अन्तरिक्ष में द्यौ में प्रवेश होता है, जब कभी हम अग्नि को चेताते हैं और अग्नि को वेद मन्त्रों से चेताते हैं, अग्नि की धाराओं पर मानो देखो, परमाणुवाद को निहारते हैं, तो मुनिवरो! वही अग्नि देखो, वैश्वानर नाम की अग्नि बन करके वही उस्वातत अग्नि बन करके वहीं मृचि नाम की अग्नि बनकर इन्द्रकेतु नाम की अग्नि बनकर के उस शब्द को हम तक पहुँचा देती हैं। वह हमारे पूर्वजों का शब्द है मानो हमारा सात्विक शब्द हो, हमारा सात्विक अध्ययन हो और मानो देखो, वही यन्त्रों में आना प्रारम्भ हो जाता है। तो विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रो! हमारा अध्ययन गम्भीर होना चाहिए।

बुद्धि विकास हेतु विज्ञान

तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, मैं विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, विचार-विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, हम ज्ञान और विज्ञान में प्रभु के रत होते रहें। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं भारद्वाज मुनि के आश्रम की चर्चा कर रहा था महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धी और यज्ञदत्ताः ये सर्वत्र मानो देखो, विज्ञान की आभा में लगे रहते और उसके जानते हुए बहुत गम्भीरता में रमण करते हुए बेटा! देखो, अपने में अपने को ले जाते और मुनिवरो! केवल इसलिये कि इसे जानना चाहिए। आविष्कार इसलिये होता जानना चाहिए क्योंकि आविष्कार को जानकर के अभिमान में न लाना चाहिए। ये बेटा! हमारे वाक् उच्चारण करने का एक मानो स्वरूप माना गया है।

तो विचार विनिमय क्या, आज के हमारे वाक् उच्चारण करने का बेटा! दो प्रकार का ये जगत् है एक रूढ़ि है तो दूसरा यौगिकवाद है। यौगिकवाद को विचारना चाहिए और रूढ़िवाद को भी विचारना चाहिए। और

रूढ़िवाद को विचारते-विचारते रूढ़ि न रहे, परन्तु रूढ़ि को अन्त में बेटा! देखो, यौगिकवाद में परिणत की जाये। वही हमारा जीवन है वही हमारी महानता कहलाती है। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा, शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती का सदैव चिन्तन करते रहे, और वह जो प्रभु है वो अनन्तमयी है जो मानो देखो, एक-एक कण-कण में व्याप्त हैं हमारे समीप है। हमारी अन्तरात्मा में विद्यमान है उसका भान रहे और उसी के ज्ञान और विज्ञान का चिन्तन करते हुए, इस सागर से पार हो जायें, ये है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा तो बेटा! मैं शेष चर्चाएँ तुम्हें कल प्रकट करूँगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मा रेवा आभ्यां दधि ब्रह्मणाः। ओ३म् यो सर्वाः रथं मन्था, स्थान स्वाहेडी, बिजनौर, दिनांक 18.2.89।

१० विभिन्न याग एवं अग्नियाँ १९ ०२ १९८९

जीते रहो! देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जो रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। और याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है, और वह उसी में वास कर रहा है।

इसीलिये हम उस परमपिता परमात्मा की, अनुपमता और उसके नाना प्रकार के विशेषण प्रायः हमारे समीप रहते हैं और हम उसको पुरोहित भी कहा करते है। वही परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है। और देखो, यज्ञां ब्रह्मणां व्रहे वही ब्रह्माण्ड में मानो ओत-प्रोत है और उसका जितना भी ज्ञान है अथवा विज्ञान है, मानो सर्वत्र धाराओं में वह विद्यमान रहता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गये हैं और वह पराविद्याओं के प्रदान करने वाले है। वो सर्वत्र हृदयों में और आन्तरिक और बाह्य जगत में सर्वत्रता में विद्यमान है। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहें।

आज का हमारा वेद मन्त्र याग के ऊपर हमारे लिये हमें प्रेरणा बद्ध कर रहा है और वेद का मन्त्र कहता है यज्ञं भवितं ब्रह्मणा व्रतं देवाः मानो वेद मन्त्र कहता है ये जो याग है ये मानवतव की वृत्तियाँ कहलाती हैं। दोनों प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहा है। एक वह याग है जिसे हम बाह्य जगत् कहते हैं। और दूसरा याग वह जो मानो आन्तरिक जगत् माना गया है। इस आन्तरिक जगत् में जाकर के, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता अपनी ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ता रहता है और वह एक जो मानो बाह्य जगत् है उस बाह्य जगत् और आंतरिक जगत् दोनों का अपने में समन्वय करता रहता है। और उसका मिलान करता हुआ अपने में यौगिकवाद को प्राप्त कर लेता है।

सर्वोपरि कर्म याग

तो आओ मेरे पुत्रो! आज का वेद मन्त्र यहाँ परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है। वहीं नाना प्रकार की उड़ानें हमारे हृदयों में देखो, प्रेरणाबद्ध रहती है। जिन प्रेरणाओं को प्राप्त करके हम संसार सागर से पार होने का प्रयास करते। मेरे पुत्रो! यहाँ ऋषि-मुनियों ने याग के सम्बन्ध में बड़ी विचित्र-विचित्र उड़ानें उड़ीं, मानो उन्होंने अपने ऊर्ध्वा में जाने का गमन किया है। गमनं ब्रह्माः तो उन्होंने बेटा! याग के सम्बन्ध में नाना ऋषि-मुनियों ने देखो, बेटा! अग्नि को जाना है। और अग्नि में जो साकल्य प्रदान किया जाता है। जो अग्नि अप्रतम देवताओं का मुख है। उस मुखारबिन्दु में जो साकल्य प्रदान कर दिया है उस साकल्य के द्वारा ही अप्रतम् ब्रह्मे देखो, उसको जानने का प्रयास किया है।

याग के विभिन्न स्वरूप

आओ बेटा! मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया है। ऋषि-मुनियों की बड़ी विचित्र उड़ानें उड़ने के लिये मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रेरणा बद्ध रहा है। तो मुनिवरो! देखो, एकां ब्रह्माः एक समय महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज के यहाँ, कुछ याग के सम्बन्ध में बेटा! विचार-विनिमय हो रहा था। और वैशम्पायन ऋषि ने यह कहा कि भई, इस याग को जानने का प्रयास करना चाहिए। मानो देखो वृष्टियाग है अग्निष्टोमयाग है, रुद्र याग है, वाजपेयी याग है और भी जैसे कन्या याग है, वृष्टियाग और भी नाना प्रकार के यागों का चयन, अश्वमेध इत्यादि यागों का चयन होता रहा परन्तु इन यागों को जानने के लिये हमें सदैव तत्पर रहना चाहिए। तो मेरे पुत्रो! देखो, जब ऋषि ने यह वाक् उद्गीत रूप में गाया तो विभाण्डक मुनि बोले कि हे वैश्म्पायन! यागों को तुम

जानते हो। उन्होंने कहा प्रभु! मैंने महाराजा अश्वपति के यहाँ नाना प्रकार के यागों का चयन किया है। मैंने पुत्रेष्टि याग को महर्षि श्रृंगी से प्राप्त किया है और वृष्टियाग मानो देखो, वृत्तिका मुनि से प्राप्त किया है और उनका बड़ा गम्भीर अध्ययन और तप रहा है। वाजपेयी याग को मैंने कागभुषुण्डी से प्राप्त किया है। उनका भी बड़ा अध्ययन रहा है। यहाँ नाना ऋषि मुनि अपने-अपने क्रियाकलापों में बड़े विचित्र रहे हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने ये वाक् कहा तो उन्होंने कहा भगवन! मैंने एक अवृत्तियाग को चित्ररेयाण कृतियों में मैंने जाना है। और वह उद्यालक गोत्र में जो शिकामकेतु उद्यालक हैं, उनसे इनको जानने का प्रयास किया है। तो मेरे पुत्रो! उन्होंने कहा भई, महर्षि शिकामकेतु उद्यालक के यहाँ चलो, हम गमन करते हैं।

महर्षि शिकामकेतु के आश्रम में ऋषियों की सभा

बेटा! नाना ऋषि-मुनियों का एक समाज महर्षि वैशम्पायन और विभाण्डक मुनि महाराज की अध्यक्षता में वह समाज गमन करता है और दण्डक वनों से गमन करते हुए मुनिवरो! देखो, उन्हें कजली वनों में आना है। वह भ्रमण करते बेटा! देखो कजली वनों में आये। वहाँ महर्षि शिकामकेतु उद्यालक देखो, अपने साकल्य व्रतं ब्रह्माः वह जैसे ही आश्रम में उन्होंने प्रवेश किया, तो पत्नी ने, उनकी दिव्या ने उनका स्वागत किया। उन्होंने प्रश्न किया कि हे देवी! आचार्य कहाँ हैं? उन्होंने कहा कि शिकामकेतु उद्यालक तो साकल्य के लिये गये है। भयङ्कर वनों में, पर्वतों में साकल्य एकत्रित करने के लिये वे नित्यप्रति जाते हैं। और वह साकल्य लाकर उससे याग करते हैं। क्योंकि महाराज इन्द्र ने एक कामधेनु गौ हमें प्राप्त करायी है। कामधेनु, गो घृत के द्वारा हम याग करते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यह वाक् स्वीकारणं प्रहे वह विराजमान हो गये। उनकी प्रतीक्षा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् महर्षि शिकामकेतु उद्यालक कुछ साकल्य और समिधा लेकर के भयङ्कर वनों से मंगलं ब्रहे अपने आश्रम में प्रवेश किया। उनकी पत्नी ने कहा प्रभु! आश्रम में नाना ब्रह्मवेत्ता विद्यमान हैं। उनसे आपको वार्ता प्रकट करनी है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। उन्होंने बेटा! देखो, वह ब्रह्माः कुछ कन्दमूल लेकर के, कुछ अन्न इत्यादि लेकर के बेटा! ऋषि मुनियों के स्वागत के लिये आश्रम में ऋषि वृत्तियों में उनके समीप विद्यमान हो गये। और उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्मणां ब्रहे कि प्रभु! आइये आप अतिथि स्वीकार कीजिये। मैं आपका अतिथि कर रहा हूँ उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। बेटा! ऋषि-मुनियों ने कुछ कन्दमूल इत्यादि उनके अन्नजल का पान किया। और पान करने के पश्चात् मेरे प्यारे! देखो, ऋषिवर विद्यमान हो गये। उसके पश्चात पति और पत्नी ने, ऋषि और ऋषि पत्नी ने कहा प्रभु! आज्ञा दीजिये आपका आगमन कैसे हुआ? हम कैसे सोभाग्य शाली हैं। जो हमारे यहाँ ब्रह्मवेत्ताओं का आगमन हुआ है। उन्होंने कहा हे प्रिय ब्रह्मणः! हे ऋषिवर! हे ब्रह्मन! हे ऋषि अमृतम्! हम इसलिये आपके आश्रम में विराजे हैं कि हम कुछ जानना चाहते हैं? उन्होंने कहा भगवन! उच्चारण कीजिये, आप क्या जानना चाहते हैं। उन्होंने कहा प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि यह अग्निष्टोम याग क्या है?

अग्निष्टोम याग

तो महर्षि शिकामकेतु उद्यालक ने कहा कि यह जो अमृतम् देखो अवृत्ति यह जो याग है यह अपने में पवित्र अग्निष्टोम कहते हैं। जो अग्न्याधान करते हुए अग्नि की ही धाराओं में, मानो अग्नि की तरंगों में प्रत्येक यजमान का शब्द चला जाता है। और वह हृदय से गान गाता है, तो वह हृदय अगम्य में ही प्राप्त हो जाता है। उसे अग्निष्टोम कहते हैं। जब देखो, यजमान बाह्य अग्नि और आन्तरिक अग्नि दोनों का एक दूसरे में समावेश कर लेता है, दोनों को एक दूसरे में परिणत कर देता है तो मुनिवरो! देखो, वह अग्निष्टोम याग कहा जाता है। बाह्य अग्नि और आन्तरिक अग्नि को दोनों का एक समूह बन जाता है तो उसका नाम अग्निष्टोम याग कहा जाता है।

उसके द्वारा जब साकल्य अग्नि में प्रवेश करता है तो बेटा! वो द्यौ-लोक को प्रवेश हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। महर्षि शिकामकेतु उद्यालक के यहाँ बेटा! पितरों का दर्शन होता रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, वह अपने आश्रम में विद्यमान होकर के दोनों अनुसन्धान और अन्वेषण करते रहते हैं और वह बेटा! अग्नि की धाराओं पर जो भी शब्द साकल्य मेरे पुत्रो! देखो, अग्निकृतियों में रत हो जाता है। वह देखो, अग्निव्रताः वह देवत्व कहलाता है।

पितृयाग

तो मेरे पुत्रो! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो मुनिवरो! देखो, ऋषि अब्रतम् उन्होंने कहा प्रभु! हमने यह जाना है कि तुम पितर याग जानते हो, और पितरों का दर्शन करते हो, उस यन्त्र को हमें दृष्टिपात कराइये। मेरे प्यारे! उनके यहाँ इस प्रकार के यन्त्र विद्यमान है जिनमें पितरों का दर्शन होता रहा है। मेरे प्यारे! पिता, महापिता, पडपिता और भी नाना पितरों का दर्शन होता रहा है। उन्होंने कहा प्रभु यह मेरे पितरों का दर्शन है। और देखो, अपने याग के द्वारा यन्त्रों का निर्माण किया और इन यन्त्रों के द्वारा मैं अपने पिता, महापिता, पडपिता देखो, मैं अपने 50 वे महापिता के क्रियाकलापों को दृष्टिपात करता रहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, अन्तरिक्ष में जो विद्यमान है। अन्तरिक्ष में द्यौ के मध्य में विद्यमान रहते हैं शब्द, उन शब्द के साथ में जो क्रियाकलाप हो रहा है, उनके क्रियाकलाप, उनके चित्र शब्दों के साथ मानो देखो, अग्नि की आभा में दृष्टिपात आते रहते हैं। हम उस अग्नि का चयन करते रहते हैं।

विभिन्न अग्नियों की व्याख्या

इसीलिये उस अग्नि को हमारे यहाँ वेणिता अग्नि कहते हैं। वेणिता अग्नि जो मुनिवरो! देखो, वैश्वानर नाम से ऊर्ध्वा में गमन करने वाली अग्नि है। अग्नि के भिन्न भिन्न प्रकार के नामों का वर्णन बेटा! जैसे हमारे इन्द्र अग्नि है, वृत्तिका अग्नि है, सोम अग्नि है, वाचक अग्नि है और भी भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नियों का चयन होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार का वर्णन कराया। तो वर्णन कराते हुए बेटा! ऋषि-मुनियों का अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हुआ। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! तो मेरे पुत्रो! देखो, नाना प्रकार की अग्नियों का चयन करना और याग के माध्यम से नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करना उन यन्त्रों को बेटा! देखो, साकारता में लाने का नाम ही मुनिवरो! देखो, विस्सृष्टि कहा जाता है। उसको हमें जानना है, आभा में लाने का हमें प्रयास करना है। तो मेरे पुत्रो! देखो, ऋषिवर बड़े प्रसन्न हुए। ऋषियों ने बेटा! और भी नाना मानो यन्त्रों को दृष्टिपात किया। याग में प्रवेश होते रहे। तो उद्यालक गोत्र के जो ऋषि हुए हैं, उनमें बेटा! कुछ ब्रह्मवेत्ता हुए, कुछ ब्रह्मनिष्ठ हुए, कुछ विज्ञानवेत्ता हुए, तो इस प्रकार के ऋषियों का आगमन हमारे यहाँ पृथ्वीवासियों में रत होता रहा है। तो याग के सम्बन्ध में ऋषि-मुनियों ने बड़ा विचित्र जाना है। उनके मानो देखो, यज्ञशाला जितने आकार की बनी हुई होती है उतने आकार का रथ बनकर के बने हुए होते हैं। बेटा! देखो, द्यौ-लोक में प्रवेश करता है।

तो मेरे पुत्रो! विचार-विनिमय क्या, हमारे यहाँ आचार्यों ने ऋषि-मुनियों ने मन्त्रों को जानकर के बेटा! उन्होंने कोई ऐसा दृश्य नहीं त्यागा है जिससे यह न कहा जाये सम्भोति ब्रह्माः लोकाम् देखो, जिससे हम याग के सम्बन्ध में गम्भीर मुद्रा में मुद्रित न हो जायें। तो बेटा! देखो, गम्भीर मुद्राओं में मुद्रित होकर के और अपने मानवीयतव को हमें जानना है। तो बेटा! आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आचार्यजन बेटा! देखो, अपने आश्रम को उन्होंने गमन किया। सर्वत्रता में जानने का प्रयास किया तो बेटा! देखो, अग्निष्टोम याग, वाजपेयी और भी भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। आज का हमारा वेद मन्त्र कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते चले जायें। आओ मेरे प्यारे! अब मेरे

प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म मधुमन्था मां गायन्त्वा यज्ञनं ब्रह्मणाः।मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद ज्ञान और विज्ञान की चर्चा कर रहे थे और उनका जो विचार-विनिमय में करने का एक माध्यम रहा है। वो ऋषि-मुनियों की विचार धाराएँ और जिस जिस गोत्र में जिस प्रकार का ऋषि हुआ है। उसका प्रायः वर्णन करते रहते हैं। परन्तु आज जहाँ ये हमारी आकाशवाणी जा रही है। वहाँ एक यजूंषि याग हुआ है। और याग को दृष्टिपात करते हुए मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न होता है। पूज्यपाद गुरुदेव तो ऋषि-मुनियों के उस याग का वर्णन कर रहे थे जो याग अनुसन्धात्मक, वे याग अनुसन्धान की प्रतिभा में रत रहने वाला है। और ऋषि मुनि मानो उनके ऊपर विचार-विनिमय में करते हुए तपस्याचरों में सदैव रत रहे हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो गागर में सागर की कल्पना करते रहते हैं।

यजमान को शुभाशीष

परन्तु जहाँ मेरा यह वाक् उद्गीत गाने का है कि हमारी आकाशवाणी, जहाँ एक याग हुआ है मेरा अन्तरात्मा उससे प्रसन्न है। क्यों प्रसन्न है? क्योंकि यह जो आधुनिक काल प्रारम्भ हो रहा है अथवा गमन कर रहा है, इस संसार को मैं वाममार्ग का काल कहता रहता हूँ क्योंकि वाम मार्ग तो बहुत पुरातन, बहुत पूर्व काल से चला आ रहा है। परन्तु जहाँ मानो देखो, सुरा और सुन्दरी में रत रहने वाला है। जहाँ द्रव्य की लोलुपता में मानव, मानव को नष्ट कर रहा है तो यह मार्ग प्रिय मार्ग नहीं। इस मार्ग में अन्धकार है परन्तु इस मार्ग में एक प्रीतिसुन्धन है जैसा पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं। परन्तु हमारा उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि मैं, मेरा जो अन्तरात्मा है वो यजमान के साथ रहता है और मैं यह कहता रहता हूँ हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, और तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग होना बहुत अनिवार्य है। यदि द्रव्य का दुरूपयोग होता है तो वही द्रव्य मानव को नष्ट कर देता है। मानवीयता नष्ट हो जाती है। और यदि वो द्रव्य का सदुपयोग करता है तो चरैवेति गमनं ब्रह्माः वो गमन करता है और वह ऊर्ध्वा में गमन करके एक समय आता है कि वह मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

राष्ट्रवाद की विवेचना

परन्तु देखो, विचार केवल यह है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराता रहता हूँ। कि मैं प्रायः जब राष्ट्रवाद की चर्चा करता हूँ, आज जब मैं राष्ट्रवाद की चर्चा करता है तो राष्ट्रवाद मानो देखो, एक विचारों में रह गया है, क्रियाकलापों में सूक्ष्म रह गया है। जब मैं यह विचारता हूँ कि रामराज्य की कल्पना करता रहता है मानव, और राम राज्य कहता है और ये कहता है कि राम अयोध्या में वास करते थे। परन्तु वे प्रातः कालीन उषापान करते थे। उषा जहाँ आपो का पान करते थे और वह पान करके मानो देखो, प्रातः कालीन याग और क्रियाकलापों में रत रहते थे। आधुनिक काल का जो राष्ट्रवेत्ता है वह उषा पान नहीं कर रहा है। वह नाना प्राणियों का रस बनाकर के अग्नि में तपाकर के पान करने वाला है। जब मैं यह विचारता हूँ हे राजन! तुझे वेद मन्त्र कहता है अध्वर्यु। और अध्वर्यु उसे कहते हैं जिस राजा के राष्ट्र में हिंसा नहीं होती। मानो देखो, वह अध्वर्यु कहलाता है। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्वकाल मैं उच्चारण कर रहे थे कि अध्वर्यु यज्ञशाला में होता है और यज्ञशाला में इसलिये अध्वर्यु कहा जाता है क्योंकि वह हिंसा से रहित है। इसलिये राजा को अध्वर्यु कहते हैं क्योंकि वो हिंसा से रहित होता है परन्तु यह जो वर्तमान का काल चल रहा है यह ऐसा काल है जिसमें अध्वर्यु न बनकर के वह हिंसक प्राणी बनकर के, हिंसा को पान कर रहा है और वो इसलिये कर रहा है कि वह पद की लोलुपता में लगा हुआ है। और जब पदों की लोलुकता में लग जाता है तो उस राष्ट्र में प्रत्येक

प्राणी अधिकार चाहने लगता है। और अधिकार को चाहते-चाहते अधिकार इतना बलवती हो जाता है, कि वह अपने में देखो, रक्त भारी क्रान्ति में वो समाज परिवर्तित हो जाता है मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी मुझे वर्णन कराया, इससे पूर्वकाल में पूज्य गुरुदेव वर्णन कर रहे थे कि विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए।

चारित्रिक पतन का परिणाम

आधुनिक काल में, वर्तमान में देखो, विज्ञान का दुरूपयोग हो रहा है। जहाँ मेरी पुत्रियाँ नृतिका बनकर के मानो गमन करने वाली है। मेरी पुत्रियों का नृत्य होता है उसको छात्र और छात्रिकाएँ सभी उसे ग्रहण करते हैं। उसे दृष्टिपात करते हैं। तो उससे अमृतम् देखो, उनका छात्रों और छात्राओं का मानो देखो उनका ब्रह्मचर्य दूषित हो जाता है। और जब अश्लील चित्रों हो तो ब्रह्मचर्य दूषित हो जाता है तो उसमें आलस, प्रमाद बलवती हो जाता है। और आलस, प्रमाद के आने पर कर्त्तव्यवाद नष्ट हो जाता है। अधिकार की पुकार होने लगती है। तो सृष्टि के प्रारम्भ से नाना राजा हुए थे, नाना ऋषिवर हुए हैं, ब्रह्मवेत्ता हुए हैं, परन्तु कोई भी ऐसा मानव नहीं हुआ जो किसी भी अधिकार को पूर्ण कर सके। अधिकार को कोई भी पूर्ण नहीं कर सकता। जब मुनिवरो! देखो, पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया। अधिकार मानो देखो, आलस का सूचक है वह आलस और प्रमाद के आने पर वह अधिकार चाहने लगता है। अधिकार किसी से पूर्ण होता नहीं, वही अधिकार मुनिवरो! इतना गहन अन्धकार में चला जाता है कि मानव-मानव का भक्षण करने लगता है। और हिंसा आ जाती है। वह मानव-मानव को नष्ट करने लगता है। राष्ट्रीय प्रणाली नष्ट हो जाती है। तो मैं मेरे पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कर रहा हूँ कि आधुनिक काल में जो विज्ञान है, उस विज्ञान दुरुपयोग हो रहा है।

धर्म व रूढ़ि

और यह इसलिये हो रहा है क्योंकि राष्ट्रवेत्ता धर्म और मानवीयता को नहीं जान रहा, धर्म और मानवीयता से दूरी जा रहा है। ये मानो देखो, रूढ़िवाद को धर्म स्वीकार कर रहा है। धर्म और रूढ़ियों में नाना प्रकार का अन्तर्द्वंद्व हो क्योंकि रूढ़ियाँ अनेक होती हैं और धर्म एक होता है। इसलिये धर्म एकोकी मानो इसमें दर्शन है, विज्ञान आभा में निहित रहने वाला है, इसलिये उस धर्म और मानवीयता को अपनाने का प्रयास करते हुए रूढ़िवाद को नष्ट कर देना चाहिए। जो राजा रूढ़ि को नष्ट नहीं करता, वो कोई राजा नहीं होता, जो रूढ़ियों को विनाश के मार्ग पर नहीं पहुँचा सकता, वह कोई रूढ़ि नहीं, अन्त में वही रूढ़ि देखो, राष्ट्र के लिये घातक बन करके रहती है।

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वाक् वर्णन कराते हुए कहा है। परन्तु देखो, मैं कई समय कहता रहता हूँ मेरा अन्तरात्मा मानो यही कहता है यज्ञं ब्रह्माः यज्ञ के ऊपर बहुत दिवसों से, बहुत कालां से आत्मा हो रहा है याग के ऊपर भी आत्मा होता रहा। परन्तु याग अपनी स्थली पर बड़ा विचित्र बनकर के रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक याग अपनी स्थलियों में विचित्र बना रहा है। ये मानवीय हृदयों में देखो, ब्रह्मवेत्ताओं के अन्तर्जगत् में विद्यमान रहा है। इसके ऊपर क्रियाव्रहे अपने में रत होती रही है। तो इसीलिये देखो, मैं यह कह रहा हूँ कि आज मैंने अपने याग को दृष्टिपात किया। मैं अपने यजमान से कहता रहता हूँ कि मेरा अन्तरात्मा यजमान के साथ रहता है हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और तेरे यहाँ द्रव्य का सदुपयोग होता रहे तो द्रव्य का सदुपयोग करना मानवीयता को पाना है। द्रव्य का दुरुपयोग करना ही अभद्र जीवन बन जाता है। तो इसीलिये मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन करते हुए यह कहा कि पुरातनकाल का राष्ट्र देखो, हिंसक बन गया है। आधुनिक काल का राष्ट्र मानो हिंसक

बन गया है हिंसा तो बहुत समय से चली आ रही है। परन्तु देखो बलवती हो रही है। परन्तु देखो, जो वर्तमान का काल है ये पदों के ऊपर भी हिंसा इसी आभा में रत रहना यह मेरे जीवन की कृत्तिका कहलाती है। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के समीप कोई वाक् उच्चारण नहीं कर रहा हूँ क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव तो अपने विचारों को देते हैं इनके बड़े परम्परागतों से बड़ा अध्ययन रहा है। विचारों में विचरणीय वृतम् इनका जीवन उन विचारों में विचरण करता रहा है मैं इनके सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं दे रहा हूँ।

राष्ट्रोन्नति के कार्य

केवल यह अवश्य कहता रहता हूँ राजन्! यदि तू अपने राष्ट को ऊँचा बनाना चाहता है तो तुझे इन रूढ़ियों के, सम्प्रदाओं के, आचार्यों को एकत्रित करके उनको शास्त्रार्थ में परिणत करना होगा तुझे ब्रह्मवेत्ता बनना है, और ब्रह्मवेत्ता राजा ही राष्ट्र को ऊँचा बना सकता है। और वह धर्म और मर्यादा को जान सकता है। जब जानता नहीं तो अन्धकार में चला जाता है। तो परिणाम क्या, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह उच्चारण करना चाहता हूँ कि आधुनिक काल का राजा देखो, अध्वर्यु न रहकर के वो हिंसक है और राष्ट्र में अपने पद की लोलुपता में लगा हुआ है। तो इसीलिये मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, मैं यही प्रेरणा देता रहता हूँ, वायु मण्डल में प्रवेश कराता रहता हूँ कि राजा को चाहिए कि ये नाना प्रकार की रूढ़ियाँ समाप्त हों और मानवीयतव रहना चाहिए। धर्म और मानवता की आभा में मानव को सदैव रत रहना चाहिए विशेष कर राजा को। और उनका अध्ययन, ब्रह्मवेत्ताओं में रत रहना चाहिए। तो ये आज मैं अपने विचारों को यहाँ विराम दे रहा हूँ। और विराम इसलिये क्योंकि मेरा पुनः से यही कि यज्ञं ब्रह्माः द्रव्यां याग होने चाहिए, याग से मानो सुगन्ध होती है। वायुमण्डल पवित्र बनता है। वेद ध्वनि से द्यौ-लोक में जागरूकता आती है। इसीलिये यह याग व्रहे आभा में हृदय से होने चाहिए। ये आज का वाक् मैं वाक् को विराम दे रहा हूँ अब मुझे समय मिलेगा तो पूज्यपाद गुरुदेव जब समय देंगे मैं समय, समय पर अपने उद्गीत गाता रहता हूँ। अपनी विडम्बना विडम्बनित करता रहता हूँ मानो देखो, इसके साथ विचार समाप्त।

(पूज्यपाद गुरुदेव)

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने बड़े विचित्र विचार दिये। कि रूढ़िवाद के सम्बन्ध में जो इनका विचार रहा है, यह बड़ा प्रिय रहा है। और इनके हृदय में राष्ट्र के प्रति बड़ी विडम्बना है मानो एक हृदय में दाह है। परमपिता परमात्मा इनकी विडम्बना को पूर्णरूपेण करें। ऐसी हमारी सदैव कामना रहती रही है और यह समय-समय पर परिर्वतन होता रहता है। समय-समय पर देखो, इसके ......

(शेष अनुपलब्ध)...... दिनांक 19.2.89 स्थान स्वाहेडी बिजनौर